# जीवन का सुख विज्ञान

लेखिका
बृषभान नंदिनी

# जीवन का सुख विज्ञान



लेखिका
बृषभान नंदिनी

मूल्य १.०२

प्रकाशक :

कौशल कुमार

मिलने का पता

नानक सदन

अम्बे सहाय रोड

सुल्तानपुर (अवध)

मुद्रक :

रामायण प्रेस, कटरा

इलाहाबाद

# दो शब्द

प्राचीन काल में हमारे यहां जब ऋषिकुल तथा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी तब विद्यार्थियों को सदाचारी तथा समाजोपयोगी बनाने की ओर ही आचार्यों का विशेष लक्ष्य रहता था। अर्थ करी शिक्षा गौण रूप से ही दी जाती थी। उसके पश्चात भी जब आधुनिक ढंग की स्कूली-शिक्षा का संचालन हुआ तब भी सदाचार शिक्षा की ओर से अधिकारीगण उदासीन ही रहे। परिणाम स्वरूप जो विद्यार्थी स्कूलों या विद्यालयों से पढ़ कर निकलते थे उनमें ईश्वर के प्रति विश्वास, अपने बड़ों के प्रति श्रद्धा, बराबर वालों पर सौहार्द तथा छोटों पर स्नेह की भावना रहती थी। वे देश के सच्चे नागरिक बनते थे।

इधर जब से इस प्रकार की पुस्तकों को पाठ्य-क्रम से बहिष्कृत कर दिया गया, तब से जिस प्रकार के विद्यार्थी स्कूलों से निकलते हैं। उनके नमूने रात दिन देखने कों मिलते रहते हैं।

आज का विद्यार्थी न तो ईश्वर के प्रति भक्ति रखता है न गुरुजनों के प्रति आदर और न अध्यापकों के प्रति श्रद्धा।

उच्चतम शिक्षा पाकर भी वह समाज के लिए किसी काम का नहीं होता है। विद्यार्थियों की इस उच्छृङ्खलता का एक सबसे बड़ा कारण सदाचार सम्बन्धी शिक्षा का अभाव है। विद्यार्थियों की इस उच्छृङ्खलता को देखकर प्रयाग विश्व विद्यालय के उपकुलपति महादेय को यह स्वींकार करना पड़ा था कि विद्यार्थियों को सदाचार की शिक्षा देना आवश्यक है उन्होंने इस आशय को प्रगट भी किया था।

हर्ष की बात है कि अब शिक्षा विभाग के बड़े बड़े अधिकारियों का ध्या
भी इस ओर गया है। वे इस बात का अनुभव करने लगे हैं कि सदाचार व
सुन्दर सुन्दर पुस्तकें विद्यार्थियों को पढ़ाना आवश्यक है। श्रीमती ब्रषभा
नन्दिनी द्वारा लिखी हुई पुस्तक इसी प्रकार की है। इसमें सदाचार की शिक्ष
देने वाली उत्तमोत्तम शिक्षाओं का संग्रह किया गया है। पुस्तक मैंने पढ़ी है
आशा है इसे बालक बालिकायें पढ़ कर लाभ उठावेंगे।

लक्ष्मी निधि चतुर्वेदी एम० ए०
साहित्य रत्न, शास्त्री

आचार्य
मधुसूदन विद्यालय इंटर कालेज
सुलतानपुर

# भूमिका

मैंने अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार सोचा कि प्रायः प्रत्येक हिन्दू घर में रामायण रहती है और नियम पालन करने वाले प्रत्येक स्त्री पुरुष उसे पढ़ते भी हैं। पर खेद है कि इतना अच्छा ग्रन्थ पढ़ कर भी लोग उस पर मनन नहीं करते। यदि रामायण पढ़ने वाले उसकी शिक्षा के अनुकूल चलने लगें तो उनका रामायण पाठ तो सार्थक होगा ही, साथ ही वे समाज के अच्छे नागरिक भी बन सकेंगे। इस पुस्तक में मैंने श्रीराम चरित्र मानस के कुछ अमूल्य रत्न चुन कर समाज के सम्मुख प्रस्तुत किये हैं। आशा है सभी भाई तथा बहिनें मेरी इस छोटी सी पुस्तक से लाभ उठा कर धर्म मार्ग पर अग्रसर होंगे तथा इन शुद्ध भावों को हृदय में रख कर ईश्वर प्राप्ति के पथ पर चलेंगे। तभी उनका जीवन सरल और समाजोपयोगी बनेगा। आज यह संसार धर्मविहीन हो रहा है। सभी अपना अपना कर्त्तव्य खो बैठे हैं। हमें माता पिता से कैसा व्यवहार करना चाहिए। स्त्री पुरुष में कितना घनिष्ट प्रेम होना चाहिए। अन्य लोगों के प्रति कैसा सदभाव रखना चाहिए। सभी राम चरित्र मानस में प्राप्त हैं। उसी से संग्रह करके यह लघु पुस्तक प्रस्तुत करके जन समूह के सन्मुख रखती हूँ। मुझमें कोई योग्यता नहीं है कि मैं पुस्तक तैयार कर सकती किन्तु हमारे पूज्य पिता श्री अम्बे सहाय जी तथा पूज्य माता का उपदेश बचपन से ही हृदय में दृढ़ हो गया है कि मनुष्य जीवन पाया है तो संसार में कुछ करके जाओ। कठिन से कठिन कार्य करना है तो हिम्मत न हारो परिश्रम से करते जाओ सफलता मिले हो गी। उसी उपदेश के आधार पर आज मुझे सफलता मिली कि अपने पूज्य माता पिता की स्मृति में यह पुस्तक लिख सकी। मेरी लघु पुस्तक से यदि जन साधारण के मन में कुछ भी सदभावना जागृत हुई तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगी।

वृषभान नन्दिनी

# विषय-सूची

# प्रारंभिक शिक्षा और माँ का उपदेश

गर्भाधान के समय और गर्भावस्था में माता-पिता के स्वभाविक रहन-सहन, शारीरिक, तथा मानसिक स्थिति के अनुकूल ही बालक गर्भाशय के सांचे में ढलता है। पुराण तथा इतिहास के पढ़ने से इसकी सत्यता प्रमाणित हो जाती है। जैसे भक्त प्रहलाद, वीर अभिमन्यु तथा कर्दभ मुनि पर अपने माता-पिता का ही प्रभाव पड़ा था। इतिहास में भी शिवाजी का चरित्र बनाने वाली उनकी माता जी जी बाई थीं।

इससे सिद्ध होता है कि माता, पिता अपने आदर्श के अनुसार जैसी सन्तान चाहें उत्पन्न करके शिक्षा के द्वारा अपने आदर्शानुकूल बना सकते हैं। मनुष्य जाति के लिए नहीं बल्कि समस्त ईश्वरीय सृष्टि के लिए यह नियम है कि जैसा उत्तम बीज और बढ़िया खेत बनाया जायगा उसी के अनुकूल उपज भी होगी।

जीवन के प्रथम चार पाँच वर्ष तक बच्चा शुद्ध विचार वाला रहता है। उसका संसार के किसी भी प्रकार के अज्ञान व विकार की ओर मन जाता ही नहीं। उसकी बुद्धि बड़ी तीव्र होती है। जिस बात को समझा कर बताया जाता है, उसे वह शीघ्र ही सीख लेता है। स्मरण शक्ति भी बहुत तीव्र होती है। उसके सारे जीवन का सांचा उसी समय ही ढलता है। यदि सांचा ही खराब बनेगा तो इच्छानुसार वस्तु का निर्माण नहीं होगा। बचपन में जो अच्छे बुरे संस्कार हृदय पर पड़ जाते हैं वे जन्म भर नहीं मिटते। इस अमूल्य काल को लाड़ प्यार में अनुचित शिक्षा देकर बच्चों को बिगाड़ देना अनुचित है। बहुत से माता-पिता कहा करते हैं कि "बचपन तो बच्चों का खेलने का समय

है। उन्हें बे रोक टोक स्वतन्त्रता से खेलने दो जब बड़े होंगे तो स्वयं सुधर जायेंगे।" इसी विचार के आधार पर माँ बाप निश्चित रहते हैं। और उनमें प्रारम्भ से ही स्वच्छता, सरलता, आज्ञाकारिता आदि की अच्छी-अच्छी आदतें डालने की कुछ चिन्ता नहीं करते।

जो गरीब माँ बाप हैं वे तो अपने बच्चों से अलग ही रहते हैं। बच्चे अलग पल रहे हैं माँ घर के धन्धे में लगी है। और जो अमीर घर के बच्चे हैं वे दाई या नौकर के हाथ पाले जाते हैं। नौकर चाहे गन्दे हों या साफ बुरी आदतें सिखायें या भली, उन्हें कोई चिन्ता नहीं। जब पढ़ने का समय आता है तब अध्यापक के संरक्षण में रख दिये जाते हैं। किन्तु संसार का सबसे बड़ा विश्वविद्यालय माँ की गोद है। माँ बाप से बढ़ कर संसार में कोई अध्यापक नहीं है।

मां की गोद में तथा घर में लड़खड़ा कर चलते और तुतला कर बोलते समय माता पिता के हर्षित हृदय से उनके सरल इशारे और हल्की त्योरी से समझा कर बताने से बालक जितना अधिक सीख सकता है उतना किसी अन्य विद्वान द्वारा बड़े होने पर नहीं। माता पिता अपने आदर्श द्वारा जो शिक्षा देते हैं। वह बच्चों के हृदयों पर सदा के लिए अमिट हो जाती है।

छोटे बच्चों के हृदयों पर लम्बे उपदेशों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वे तो मां बाप को जैसा करते देखेगें, उसी का अनुकरण करेंगे। कितने ही मां बाप ऐसे हैं जो अपने बच्चों से तो कहते हैं कि प्रातः काल उठना चाहिए और स्वयं देर तक बिस्तर पर पड़े रहते हैं। बच्चों को सत्य बोलने के लिए समझाते रहते हैं और स्वयं झूँठ बोला करते हैं। बच्चों से कहेंगे कि जुआ खेलना मदिरा व सिगरेट पीना बहुत बुरा है पर स्वयं जुआ भी खेलेंगे और मदिरा भी पियेंगे। इस प्रकार के थोथे उपदेशों का बच्चों के हृदयों पर क्या अच्छा प्रभाव पड़ सकता है। बल्कि इसका बुरा ही प्रभाव पड़ता जायगा।

इसलिए यदि माता पिता अपनी संतान को योग्य बनाना चाहते हैं तो उन्हें अपने उच्च आचरण का आदर्श उनके सामने रखना चाहिए। ये इस भ्रम में न रहें कि बच्चा अपनी नन्ही-नन्ही आखों से मेरे आचरणों को नहीं देखता। वह सब कुछ देखता सुनता है और उसके कच्चे मस्तिष्क पर प्रत्येक बात का असर भी पड़ता है। इसलिए भी बाप का मुख्य कर्त्तव्य है कि वे अपने सुख, दुःख इच्छा अनिच्छा की परवाह न करके अपनी प्यारी संतान को राष्ट्र का आदर्श दीपक बनावें।

जो आदतें बचपन में पड़ जाती हैं, वह आजीवन बनी रहती हैं। और तब मनुष्य अपनी बचपन में पड़ी आदतों के अनुकूल ही बिना कुछ सोचे समझे कार्य करने लग जाते हैं। चाहे परिणाम बुरा हो या भला इसकी कोई चिन्ता नहीं। बड़े होने पर किसी भी आदत को छोड़ना बहुत ही कठिन हो जाता है। यदि उनको आरम्भ से न टोका जाय तो बालक माता और पिता दोनों के लिए दुखदाई होता है।

माता पिता का कर्त्तव्य है कि वे अपने आलस्य और अनियमित आचरण को त्याग कर बच्चे को जन्म से ही अच्छे नियमों का पालन करायें। आरम्भ से नियत समय पर दूध पिलावें, नहलावें तथा सुलावें। प्रत्येक कार्य समय-समय पर नियमानुसार ही करें। ऐसा करने पर बालक स्वाभाविक रूप से नियम-बद्ध होता चला जायेगा और उसका स्वास्थ्य ठीक रहेगा।

गोद में लेने की आदत बच्चों में नहीं डालनी चाहिए। नहीं तो वह भविष्य में दुखदाई सिद्ध होगा। ज्यों-ज्यों बालक बड़ा होता जाय उसमें अपने खिलौने कपड़े तथा पुस्तकों को नियत स्थान पर रखने की आदत सिखानी चाहिए। नहीं तो घर कबाड़खाना बना देगा स्वच्छता की आदत आरम्भ से ही डालिए बालक को सदा स्वच्छ रखिए। बड़ा होने पर उसे स्वच्छ रहने का उपदेश दीजिए। मिट्टी में लोट पोट कर न खेलने पाये। गीले और मैले हाथ तथा नाक अपने पहिने हुए कपड़ों में पोछे तो फौरन टोक देना चाहिए।

भोजन करते समय ध्यान रखना चाहिए कि भोजन अपने कपड़ों पर न गिराने पाये।

बच्चों को आरम्भ से ही आज्ञाकारी बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। पर इसका यह अभिप्राय नहीं कि जरा-जरा सी बातों पर डांटा मारा जाय। अधिक डांटने-मारने से भी तो बच्चे हठी, क्रोधी हो जाते हैं। ऐसा करने से बच्चे काम भय से करेंगे प्रेम और विश्वास से नहीं। आरम्भ से ही उनमें ऐसी आदतें पड़ती जायँ कि उन्हें अपने माता, पिता, भाई, बहिनों पर प्रेम विश्वास हो। सदा उनके इशारे पर चलने को प्रस्तुत रहें। बच्चों के साथ सदा प्रेम का व्यवहार करना चाहिए। १६ वर्ष के बाद बच्चों के साथ मित्र जैसा व्यवहार करना चाहिए।

बच्चों की अच्छी आदतें डालना ही माता पिता का सच्चा प्यार है, क्योंकि इससे उसका जीवन सुधरता है। तब वे सदा सुमार्ग पर चल कर जीवन का सच्चा सुख उठा सकते हैं। अधिक लाड़ प्यार से बालक स्वार्थी हो जाते हैं कि प्रत्येक वस्तु हम ही को मिले और अन्य भाई बहन बंचित रहें। वे मां बाप से एक-न-एक चीज की मांग किया ही करेंगे जब आवश्यकतानुसार उनकी इच्छा बराबर पूर्ण होती जायगी तब उनकी इच्छा नित्य नई ही होती जायगी बच्चों के साथ सच्चाई और इमानदारी का व्यवहार रक्खा जाय ताकि उनकी भी वैसी ही आदतें पड़ें। बच्चा जब कोई अच्छा कार्य करे तब उसकी प्रशंसा कर देनी चाहिए। इससे उनका उत्साह बढ़ता है और वे सदा मनोकूल कार्य करते हैं। बहुतेरे माता पिता बच्चों की शरारत पर डांटते हैं और भले कार्य पर उनकी प्रशंसा नहीं करते। ऐसा करने से बालक स्वभावतः निडर हो जाता है। बच्चों को सदा साहसी और निर्भय बनाना चाहिए। उनको ऐसे-ऐसे महापुरुषों का जीवन चरित्र सुनाना चाहिए जो इस दुनियाँ में कुछ काम कर चुके हों। ऐसा करने से उनके हृदय व मस्तिष्क दोनों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

जन्म के समय से प्रत्येक मनुष्य को पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ईश्वर देते हैं। फिर क्या कारण है कि संसार के लोग असंख्य प्रकार के होते हैं। कोई ज्ञानी, कोई महाज्ञानी, कोई संसार में अनेक लाभदायक वस्तुओं का आविष्कार करता है तो कोई एक छोटा सा कार्य भी पहाड़ समझता है। कुछ इतने बड़े चित्रकार हैं जो आदमी की फोटो ही उतार लेते हैं और कुछ के लिए एक सीधी रेखा भी खींचना दुर्लभ हो जाता है। इसका पहिला कारण तो उनकी त्रुटिपूर्ण शिक्षा ही है।

ज्ञान तथा कर्म शक्ति का जितना अधिक अभ्यास किया जायगा वह शक्ति मनुष्य में उतनी ही अधिक होती जायगी। और जिस शक्ति का जितना कम प्रयोग होगा वह शक्ति उतनी ही क्षीण होती जायगी तथा वह आलसी होता जायगा। माता पिता को यह सिखलाना चाहिए कि बच्चे नाक, कान, आँख, जिह्वा, हाथ, पैर सभी का उपयोग भली-भाँति करें। बालक के सभी अङ्गों की शक्ति तीव्र होनी चाहिए जिससे उन्नतिशील बन सकें। इसी को प्रारंभिक शिक्षा कहते हैं जिससे भविष्य की नींव पड़ती है। बालपन में बुद्धि बहुत तीव्र होती है। मन ऐसा जिज्ञासु होता है कि नई नई वस्तुएँ देखने तथा सीखने का उत्साह रहता है। उस समय उनके मन के अनुकूल अच्छी शिक्षा दी जाय और उनके समझ में आ जावे तब उन्हें दिन पर दिन अनेक बातों का ज्ञान होता जायगा।

बालक से सदा प्रातःकाल उठने की आदत डालनी चाहिए। उसको सूर्य्य उदय और अस्त होते समय की सुन्दर छवि आकाश की मनोहर नीलिमा तारे मेघ, तथा वर्षा की बहार का दिग्दर्शन कराना चाहिए संभव है कि प्रकृति की महान सुन्दरता को देखने से ही बालक पर अच्छा प्रभाव पड़े और ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति का संचार हो जावे तथा इस सुन्दर जगत के रहस्य को जानने के लिए उत्सुक हो जावे।

चरित्रवान, बुद्धिवान तथा उन्नतिशील बनाने की पहिली सीढ़ी है। छोटे-पन से हो धार्मिक विचार का अनुयायी होना। माता पिता आदि के प्रति आज्ञा-

कारी बनना, सबसे परस्पर प्रीत रखने वाला राग-द्वेष से रहित, नम्र स्वभाव-वाला, कपड़े आदि नियमानुकूल पहिनने वाला, घर की प्रत्येक वस्तुओं को सँभाल कर रखने वाला इत्यादि अच्छा स्वभाव पड़ जाने पर वही-चरित्रवान पुरुष बन जायगा जिससे विश्व का कल्याण होगा। बच्चे के हृदय पर घर और समाज संगठन का प्रभाव इस प्रकार का होना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति अपने को एक विशाल परिवार का रक्षक समझे। और सबों के दुख सुख में हाथ बटाने का भाव हृदय में दृढ़ रहे। किन्तु अधिकांश माताएं ऐसी हैं जो बच्चों को उचित शिक्षा नहीं देतीं। प्रेम का मर्म नहीं सिखातीं, धर्म की बातें नहीं बतातीं। ध्यान देने योग्य बात है कि ऐसे अशिक्षित तथा धर्म के प्रतिकूल चलने वाली संतान से क्या अपना तथा देश का कल्याण हो सकता है।

अयोग्य संतान उत्पन्न करने से तो बन्ध्या रहना अति उत्तम है, अयोग्य संतान पैदा करके ईश्वर के सुन्दर संसार को दूषित करना है। जितनी बुराइयाँ हो रही हैं, वह माता के अच्छी शिक्षा न देने के कारण हो रही हैं।

पुत्र या पुत्री एक ईश्वरीय रत्न है। उसमें सभी गुण विद्यमान हैं। पर अयोग्य माता अपनी संतान में धर्म और गुणों का विकास नहीं होने देती वही पतन का मार्ग बन रहा है। अधर्मी संतानों द्वारा ही देश का धर्म लोप हुआ जा रहा है। दिन पर दिन अपने घर के व्यवहार तथा देश पतन की ओर अग्रसर होता चला जा रहा है।

योगियों का मत है कि जब जीव जन्म लेता है। और पुनः मरता है तो वह स्वत्रंत नहीं है। बल्कि इस मत के अनुसार जन्म देते ही मां पुत्र या पुत्री की स्वत्रंता छीन लेती है। वह जीव जो दिव्य लोक में विचरण करता रहा उसे बुला कर मृत्यु लोक में कैद कर नौ माह की नरक यातना स्वयं भोगती है और बच्चे की यंत्रणा का कारण बनती है। पैदा करने के उपरान्त यदि संतान को शिक्षित नहीं बनाती तो उसका जीवन निरर्थक हो जाता है। केवल पुत्र उत्पन्न कर देने से ही कोई स्त्री वास्तविक माता नहीं कहलाती। वास्त-

विक माता तो वही कहला सकती है, जो संतान को मनुष्य और मनुष्य से देवता बना दे। माता बनने के लिए तपस्या की पदवी आसान नहीं है आदर्श की आवश्यकता होती है। तपस्या से जब शरीर और मन दोनों विकाररहित हो जाते हैं, तब जो पुत्र उत्पन्न होता है। वही धर्मात्मा होता है। उसी धर्मात्मा आदर्श मनुष्य को उत्पन्न करने वाली स्त्री वास्तविक माता है।

"भारत का उद्धार ऐसी ही माताओं के हाथ में है जो अपनी संतानों को इस योग्य बना दें कि वे धर्म के ऊपर बलिदान हो जान के लिए उद्यत रहें। उनको यह शिक्षा दें कि स्वयं कष्ट उठालो पर दूसरों के संकट में हाथ बटाओ। संसार में सबसे प्रेम करो। सभी स्त्रियों को मां के समान समझो। तुम मेरे ही नहीं, समस्त संसार के हो। इसी आधार पर तुम परिवार तथा देश के प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करो।" इन शिक्षाओं का पालन करने वाला मनुष्य ही संसार में नाम कमायेगा, तथा धर्म और ऐश्वर्य से सदा परिपूर्ण रहेगा। अन्त में मरने के बाद अपना नाम अमर करके इस लोक से जायगा।

जिस प्रकार मकान की नींव कमजोर होने पर पूरा मकान कमजोर हो जाता है। उसी प्रकार बचपन में अच्छी शिक्षा न मिलने पर बच्चे का समस्त जीवन निर्बल हो जाता है। केवल उच्च श्रेणी की डिगरी प्राप्त कर लेने से कोई लाभ नहीं होता। हृदय में धर्म का अंकुर नहीं है तो सब डिगरी प्राप्त करना व्यर्थ है। इस जीवनरूपी नौका की मुख्य खेवनहार मां ही होती है। यदि मल्लाह अच्छी तरह नाव खेना नहीं जानता तो नाव डूब जाने का सदा भय ही रहता है, उसी भांति यदि बचपन में उचित शिक्षा नहीं मिलती तो बच्चे का अधर्म की ओर जाना निश्चित सा ही हो जाता है। वह चोर, व्यभिचारी, दुर्व्यसनी, आलसी, जुआरी, शराबी इत्यादि दुराचारी का अनुगामी होगा ऐसी दशा में वह दिन पर दिन स्वयं दुख भोगेगा और जिसके साथ रहेगा उसको भी कष्ट देगा। अपने परिवार, मां, बाप को भी सुख नहीं दे सकेगा पति

पत्नी और भाई भाई में भी प्रति नहीं होगी। गृहस्थ लड़ाई का केन्द्र बना रहेगा।

मां की शिक्षा पर ही जीवन का सारा सुख दुःख, मोक्ष, धर्म, नरक आदि निर्भर है। इसलिए प्रत्येक मां को अपने बच्चों को बचपन ही से उत्तम शिक्षा देनी चाहिये। जिससे वह आदर्श लाल बने और उसका तथा उसके द्वारा समाज का कल्याण हो। कहा भी है :—

पुत्रवती युवती जग सोई। रघुपति भक्त जासु सुतहोई।
नतरु बांझ भलि वादि वियानी। राम बिमुख सुत ते हित सानी।

संसार में पुत्रवती स्त्री वह है जिसका पुत्र ईश्वर के प्रति भक्त हो। नहीं तो बांझ ही रहना अच्छा है। धर्म-बिहीन तथा भगवान से बिमुख पुत्र से हानि ही हानि होगी। माता सुमित्रा ने अपना प्रेम कुछ नहीं समझा। उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक लक्षमण जी को वन जाने की आज्ञा इन शब्दों में दे दी :—

तात तुम्हार मातु बैदेही। पिता राम सब भांति सनेही।
अवध तहां जहां राम निवासू। तहइं दिवस जहं भानु प्रकासू।
गुरु पितु मातु बन्धुसुरसाई। सेइव सकल प्राण की नांई।
पूज्यनीय प्रिय परम जहांते। सब मानिए राम के नाते।
अस जिय जानि संग बन जाहू। लेहु तात जग जीवन लाहू।
राग रोष ईर्षा मद मोहू। जनि सपनेहु इनके बस होहू।
जेहि न राम बन लहैं कलेशू। सुत सोइ करेहु यही उपदेशू।

"तुम्हारे माता पिता" जानकी जी अथवा श्री राम चन्द्र जी तो वही रहेंगे। जहां राम जी रहें वहीं अयोध्या है। जहां सूर्य का उजेला है वहां ही दिन है। गुरू, माता, पिता, भाई, देवता और स्वामी इन सबकी सेवा प्राणों के समान करनी चाहिए। रामचन्द्र जी परम पूज्य हैं ऐसा मन में जानकर साथ बन में जाओ और जीने का लाभ उठाओ। मद, मोह राग, रोष, डाह

आदि के आधीन स्वप्न में भी न होना सब प्रकार के दोषों को छोड़ कर मन, कर्म और वचन से राम जी की सेवकाई करना। बन में तुम्हें सब प्रकार का सुख है। हे पुत्र तुम वही करना जिससे रामचन्द्र जी और सीता को बन में क्लेश न हो। वही उपाय करना। कितने सच्चे प्रेम से भाई २ में प्रेम रखना सिखाया था। आदर्श माताओं को अपने बच्चों के हृदयों में यही भावना भरनी चाहिए। ताकि वे आगे चल कर छोटी छोटी सी जायदाद के पीछे सर न उठावें। आपस में एक दूसरे के प्रति प्रेम रख कर एक दूसरे के सुख-दुख में हाथ बटावें

कौशिल्या जी से श्री राम जी बन जाने की आज्ञा लेने गये तो उन्होंने सोचा :

राखौं सुतहिं करहुँ अनुरोधू। धर्म जाइ अरु बन्धु बिरोधू।
कहौं जान बन तौ बड़िहानी। संकट शोच बिकल भय रानी।
बहुरि समुझि तिय धर्म सयानी। राम भरत दोउ सुत सम जानी।

विचार किया कि हठ करके बन जाने से रोकती हूँ तो धर्म जाता है और भाई से प्रेम घटेगा। तथा बन जाने को कहती हूँ तो बड़ी हानि है। इस संकट के समय कौशिल्या जी व्याकुल हो गई। फिर न्याय और धर्म में चतुर रानी कौशिल्या जी ने राम और भरत दोनों पुत्रों को एक ही समान समझ कर कहा।

राज देव कहि दीन्ह बन। मोहिं न सेच लवलेश।
तुम बिन भरतहिं भूपतिहिं। प्रजहिं प्रचण्ड कलेश।

राज्य देने को कह कर तुमको राजा ने बनवास दिया उसका मुझे तनिक भी शोच नहीं है। परन्तु तुम्हारे बिना भरत को और प्रजा तथा राजा को बड़ा कठिन क्लेश होगा।

माता कौशिल्या जी का सब पुत्र के साथ प्रेमभाव सदा एक ही सा रहा। बन में कौशिल्या जी सुमित्रा जी से कहती हैं :—

कौशिल्या कह दोष न काहू । कर्म विवश दुख सुख छति लाहू ।
कठिन कर्म गति जान बिधाता । जो शुभ अशुभ कर्म फल दाता ।

अर्थात् कर्म के ही बश दुःख सुख, हानि लाभ होते हैं कर्म के कठिन गति ब्रह्मा ही जानते हैं जो अच्छे बुरे कर्मों के फल देने वाले हैं । इतना दुःख होते हुए भी मुझे तो केवल भरत जी की ही चिन्ता है—

लखण राम सिय जाहिं बन । भलि परिणाम न पोच ।
गहवर हिय कह कौशला । मोहिं भरत कर शोच ।

कौशिल्या जी गदगद बचन बोलीं कि लछमण, राम, सीता बन जायँ । अच्छा फल मिलेगा, बुरा नहीं परन्तु मुझे तो भरत का शोच है कि ये राम जी का वियोग सह सकेंगे या नहीं ।

यह कौशिल्या जी का शुचि निर्मल प्रेमभाव है उनमें राम और भरत जी पर सामान्य प्रेम था हृदय में द्वेष लवलेश मात्र भी नहीं था कि भरत जी ही के कारण राम को बनवास हुआ था । आधुनिक युग की मातायें सब लड़कों को एक समान समझना भूल गई हैं । किसी लड़के को ज्यादा किसी को कम लड़की और बहू में भी अन्तर रखना ।

माँ के इस दूषित व्यवहार ही के कारण घर में एक दूसरे से विद्रोह पैदा होने लगा है । शनैः शनैः यह ईर्षा द्वेष का गोला तैय्यार होके भयंकर रूप धारण करता है । जिस भाँति बम का गोला गिर कर तहस नहस करता है । उसी भांति ईर्षा द्वेष का गोला भी फूट कर कुमति का रूप धारण कर घर परिवार भाई-भाई, बहू-बेटी, पति-पत्नी आदि का प्रेम लोप कर जीवन और गृहस्थी सब नरकवत् बना देता है । अपनी संतान का सुख चाहने वाली प्यारी माताओं संतान पैदा करने के प्रथम अपने सब कर्त्तव्यों पर दृढ़ हो जाइए, जिससे आप सबों की संतानें सुयोग्य रत्न बन कर आपका तथा परिवार और देश विदेशियों के साथ अपना कर्त्तव्य पालन कर सब का प्यारा बनकर संसार में विचरण करे । ऐसा ही कर्त्तव्यपरायण लाल सबके आँखों का तारा

बनकर संसार में नाम इज्जत कमायेगा तथा प्रभु का प्यारा बनकर धन पुत्र से परिपूर्ण होकर अन्त में अमरपुर जायगा। इससे आपका भी संसार में नाम रहेगा कि अमुक माता ने ऐसा आदर्श लाल पैदा किया। पुत्री को सब शिक्षा देने के अतिरिक्त यह भी सिखा देना अनिवार्य है। जैसे रानी सुनैना और मैना जी ने सीता जी व पारवती जी को समझाया था बिदा करते समय :

करहु सदा शंकर पद पूजा । नारी धर्म पति देवन दूजा।

मैना जी कहती हैं कि शिव जी के चरणों की सदा पूजा किया करना यानी पति की मन कर्म बचन से सेवा करना क्योंकि स्त्री के लिए पति देवता है उसकी सेवा करना ही अपना धर्म है।

होइहहु सन्तात पियहिं पियारी। चिर अहिबात अशीश हमारी।
सास ससुर गुरु सेवा करेहूँ। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू।

तुम अपने पति की अति प्यारी हो और अमर सुहाग हो यही अशीश हमारी है। सास ससुर और गुरु की सेवा करना पति की रुख देख उसकी आज्ञा मानना।

पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ। सुयश धवल जग कह सब कोऊ।

पुत्रियों तुमसे तो दो वंश पवित्र होंगे। तुमको तो बहुत ही कर्त्तव्य परायण होना चाहिए। जिससे तुम्हारा उज्ज्वल यश कीर्ति संसार में व्याप्त हो।

---

# सुखमय जीवन कैसे हो ?

इस में सुखमय जीवन कैसे बने, इसी पर कुछ विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं। सुख की अभिलाषा सभी को रहती है, ध्यान सदा सुख ही की ओर जाता है, किन्तु दुःख हर एक प्राणी झेलता ही है। इस दुःख सागर में गोता खाते-खाते जीवन लीला समाप्त तक हो जाती है पर सुख खोजते-खोजते दुःख मिटता नहीं।

मनुष्य को जानना चाहिए कि जीवन क्या है और इसे कैसे व्यतीत करें कि सुख मिले। क्योंकि जीवन ही से सुख का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि जीवन ही नहीं तो सुख कहाँ ? इसलिए जीवन को शुचि निर्मल और स्वस्थ रखने के उपाय करने चाहिए। सुख का होना कुटुम्ब परिवार, धन वैभव पर नहीं, स्त्री, पुत्र, आदि पर नहीं, वह तो सब अपने किये हुए व्यवहारों पर है।

प्रथम तो अपने जीवन को दीर्घ बनाने का प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि जीवन का आधा सुख तो स्वास्थ्य ही पर निर्भर है। रोगी निर्बल मनुष्य संसार में कुछ भी नहीं कर सकता। स्वास्थ्य ठीक रहने के लिए सदा नियम से रहना, व्यायाम करना, ताजी हवा का सेवन करना, अपने शरीर के अनुकूल पौष्टिक भोजन करना आवश्यक है। जीवन संरक्षण हेतु प्रति क्षण इन नियमों को नहीं भूलना चाहिए। यदि कभी भूल हो जाती है तो स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। तब केवल उठते-बैठते रोना ही आता है। इसलिए सुख का पहिला साधन स्वास्थ को ठीक रखना है।

अब मन में उत्पन्न होने वाली सभी उत्तेजनाओं पर ध्यान दीजिए जो प्रत्येक जन के हृदय में प्रतिक्षण प्रवेश किये रहती है। जिस कारण मनुष्य को सब सुख होते हुए भी दुःख से हर समय व्यथित हो अपना जीवन किसी

प्रकार से व्यतीत करते हैं उन विकारों को त्याग देना चाहिए। जो सुख के लिए कांटा हैं। जैसे काम, क्रोध, मोह, लोभ, तृष्णा, राग, द्वेष, झूँठ, आदि बिकार से ही भयंकर दुःख उत्पन्न हो जाते हैं जो व्यर्थ ही दुःख उत्पन्न करके सुख मिटा देते हैं। शान्ति हृदय होकर इन बिकारों पर मनन करिए कि हमारे हृदय में कोन-कौन बिकार हैं और हम उनसे कौन-कौन से दुःख भोग रहें हैं। अथवा किस विकार से क्या परिणाम मिल सकता है। काम मन की उत्तेजना युक्त बिलासता है। यदि काम बासना की पूर्ति का उपाय होता जाय तब तो यह बिलासता बढ़ती ही जायगी। इसी से अन्धे होके उन्हें धर्म का रास्ता नहीं सूझेगा, फिर चाहे परिणाम कितना ही भयंकर हो सांप का फन और आग की चिनगारी पकड़ कर भयानक काल के फन्दे में भले ही पड़ जावें, पर उसे हाथ में लेने को सदैव तत्पर रहेंगे। समझते हैं कि सुरापान, परनारी गमन आदि मनुष्य को पतन के द्वार पर पहुँचा देती हैं। परन्तु अविवेकी जन जिन के ज्ञानचक्षु बन्द हैं, उनकी रुचि अपेक्षा-कृत इधर ही जाती है। इन विषयों को भोग कर क्या परिणाम निकलेगा इसकी कुछ फिक्र नहीं है। ऐसे व्यक्ति विषयों में ही स्वर्गीय सुख का अनुभव करते हैं। यह नहीं जानते कि सुख तभी तक है, जब तक पास में धन और स्वास्थ्य है। इस क्रूर कर्म से पैसा भी शीघ्र समाप्त होकर दरिद्रता आजाती है और शरीर में अनेकोंनेक बिमारियां जैसे तपेदिक, पागल होना नेत्र की शक्ति क्षीण होने लग जाते हैं। समाज में तिरस्कार होगा, घर के लोग असन्तुष्ट रहेंगे, अनेकों आपत्तियां हर समय 'घेरे रहेंगी. ऐसी दशा में क्या मनुष्य सुखी रह सकता है ?

-को न कुसंगति पाइ नशाई। रहे न नीच मते गरुआई।

इस कामबासना की उतपत्ति कुसंग से जागृत होती है। जब युवक और युवती का एकान्त में संग होता है तब धीरे-धीरे आँखों द्वारा काम झांकने लगता है। जितना अधिक अवसर मिलेगा काम का कार्य बढ़ता ही जायगा। उस समय यह दशा हो जाती है कि,

ब्रह्मचर्य व्रत संयम नाना । धीरज धर्म ज्ञान विज्ञाना ।
सदाचार जप योग विरागा । सभय विवेक कटक सब भागा ।

ब्रह्मचर्य—इन्द्रियों का बश में करना, धैर्य्य, धर्म, ज्ञान ब्रह्मज्ञान सदाचार, जय, विषय बैराग्य आदि सब ज्ञान, काम के प्रवेश होते ही मन से भाग जाते हैं। यदि किसी स्त्री से प्रीत हो गई तो रस ले ले के उससे बात करने में आनन्द आता है तथा उसकी सुन्दरता अमूल्य मालूम होती है। बस गुप्तरूप से काम विकार का मनमोहक मंत्र यहीं से प्रारम्भ होता है। श्री राम जी कहते हैं :—

लक्षमण देखहु काम अनीका । रहहिं धीर तिनके जग ली का ।
यहि के एक परम बल नारी । तेहि ते उबर सुभट सोइ भारी ।

हे लक्षमण। काम की सेना देखो। जो कोई इसे देख के धर्म से रह जावे उन्हीं की मर्यादा है। काम उत्पन्न करने वाली स्त्री है जो उस से बच जाय वही बड़ा योधा है।

यदि अपने चरित्र को पवित्रता से सुरक्षित रखना है और पतन की ओर नहीं जाना है तो अविवाहित दशा में पुरुषों के अकेले संग से लड़कियों को बचना चाहिए तथा लड़कों को एकान्त में किसी स्त्री से बात चीत हन्सी मजाक नहीं करनी चाहिए। जिस प्रकार रुई और आग को एक क्षण भी समीप रखना खतरनाक है, उसी भांति गैर स्त्री पुरुष को एक क्षण भी एकान्तबास नहीं करना चाहिए इस दशा में काम बिना बुलाये ही प्रगट होता है।

अच्छे और बुर वातावरण ही के प्रभाव से जन समूह सुधरते और बिगड़ते हैं। मनुष्य को सदा विचारबान विद्वान त्यागी, और उदार व्यक्तियों का संग करना चाहिए। जो अच्छे विचार वाले के सम्पर्क में रहता है, उस व्यक्ति का मन शान्त, निर्मल, शुचि और बुद्धि तीव्र होती है। तब वह काम के झकोरों से बचता है। मन को सदा अपने बस में रखना चाहिए। अपने भाव को सदा पवित्र रखना चाहिए। यही मूल धर्म है।

जननी समझहि पर नारी । धन पराय बिषते बिष भारी ।

पुरुष अथवा नारियों को अपने मन को सुदृढ़ सांकल से बांध कर ऐसा मजबूत बना लेना चाहिए कि चाहें जान चली जाय पर हम अपना मन नहीं डिगायें। इसी धारणा को दिल में बराबर रखने से नींव मजबूत पड़ती जायगी तब अपना हृदय दृढ़ हो जायगा ।

ऊसर बरसे तृण नहि जामा । संत हृदय जस उपज न कामा ।

प्राचीन काल के ऋषि मुनि संसार के कोलाहल से दूर रह के निर्जन बनों में ब्रह्म चिन्तन करते थे, जिससे एकाग्र होके मन संतुलित रहे। किसी तरफ से विषय का झोंका ही न लगे। यही धारणा अपने हृदय में रख कर प्रत्येक नरनारी को संसार में न उलझ कर अथवा अपने सद विचारों द्वारा पति पत्नी कामरूप में बन्ध कर नहीं, बल्कि आपस में आदर्श सच्चा प्रेम रख कर अपनी गृहस्थी में सुख उठा कर अन्त में उसी परम सुखधाम जाने योग्य बनें। जिस धाम के लिए संत लोग तपस्या करते हैं वही पदवी और सुख सद विचारों द्वारा अपनी गृहस्थी में रहते हुए प्राप्त करके सुख से जीवन व्यतीत करिए।

क्रोध—लखण कहेउ हन्सि सुनहु मुनि । क्रोध पाप कर मूल ।
जेहि बश जन अनुचित करहिं । चरहिं विश्व प्रति कूल ।

लक्षमण जी हँस कर परशुराम जी से कह रहे हैं कि क्रोध ही पाप की जड़ है। जिस के बस में होकर लोग अधिक-से-अधिक अनुचित कर्म कर डालते हैं।

तात तीन अति प्रबल खल । काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान निधान मन । करहिं निमिष मह क्षोभ ।
लोभ के इच्छा दम्भ बल । काम के केवल नारि ।
क्रोध के परुष बचन बल । मुनिवर कहहिं बिचार ।

जिस प्रकार आग का कार्य भयंकर कार्य करना है कि वह तिनके से लेकर बहुमूल्य तथा महान वस्तु तक जला देती है। उसी प्रकार क्रोध के आवेश में आकर मनुष्य विवेकशून्य हो जाता है। तब उस समय वह भयंकर रूप धारण करके चाहे कुछ कर सकता है। उसे भय नहीं लगता कि हम क्या कर रहे हैं। उस आवेश का परिणाम बहुत बुरा ही क्यों न निकले, किन्तु, ऐसे व्यक्ति अपनी आदत से लचार रहते हैं। क्रोध तो मनुष्य को दैत्य बना कर उससे कितने ही क्रूर कर्म करा डालता है। यहां तक कि अपने हितैषी को भी जली कटी बातें कहते लज्जा नहीं आती। उसके साथ दुरव्यवहार करने को विवश कर देता है। कितने ही जन ऐसे भी हैं कि जिन के लिए मधुर भाषण करना दुसाध्यसा है। कटु वाक्य बोलना ही साध्य है। जिसके प्रभाव से सगे सम्बन्धी को भी जली कटी सुना कर हृदय विदीर्ण कर सदा के लिए प्रेम लोप कर देते हैं। क्रोधी मनुष्य कभी शान्तिपूर्वक नहीं रह सकता, क्योंकि गृह में हर एक व्यक्ति से कुछ-न-कुछ त्रुटियां हुआ ही करती हैं। २४ घंटे में न जाने कितनी बार क्रोध की ज्वाला भड़केगी तब क्या उस घर वाले या स्वयं कोई सुखी रह सकता है। यदि पति पत्नी दोनों क्रोधित हुए और मां बाप के प्रभाव से बच्चे आदि भी उसी रंग में रंगे हुए निकले तब क्या कहना है। तब तो भीषण दंगा घर में हर समय मचा रहेगा। यदि एक क्रोधी नहीं है तो क्रोध की ज्वाला प्रचंड रूप छोड़ कर सम रहेगी। किन्तु आपस का व्यंग बचन सुन कर अन्दर-ही-अन्दर वह ज्वाला जलती रहेगी। परिणाम स्वरूप मानसिक वेदना और विकारों से ग्रसित होकर, हिस्टिरिया, सर दर्द, पागलपन, घबड़ाहट, दिल का कमजोर होना और ईर्ष्या आदि विकार तथा अन्य बिमारियां पैदा हो जायगीं। क्रोध के बेग से नित्य नवीन दुःख समाचार होते ही रहते हैं। जिस प्रकार जंगल में जाने से शेर सांप आदि का भय रहता है। उसी प्रकार क्रोधी को देख कर भय लगता है कि कहीं अपने कटु वाक्य रूपी बाणों द्वारा छेद न डाले। भूकम्प आने पर पृथ्वी पर मकान मनुष्य आदि की क्षति हो जाती है। उसी भाँति कड़वे शब्दों द्वारा मनुष्य का हृदय फट जाता है। तब वे शब्द जिन्दगी

भर बाहर नहीं आते और कलेजे में चुभा करते हैं क्रोध के समय सौन्दर्य्यमयी आकृति बिकराल सी प्रतीत होने लगती है उस समय अपनी आकृति दर्पण में देखने से स्वयं ही वह रूप प्रतीत हो जायगा। क्रोध का आवेश तो क्षणिक पागलपन भी कहा जा सकता है। डाक्टरों और संतों का कहना है कि मनुष्य ४-५ घंटे तक क्रोध में भरा रहे तो काफी मात्रा में खून जल जाता है। शरीर का ताप क्रम बढ़ कर तमाम बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं क्रोध के समय सांस भी तीव्र चलने लगती है जिसके फलस्वरूप आयु भी क्षीण होती है। जिस प्रकार वर्षा ऋतु में धूल दूर हो जाती है उसी भांति क्रोध करने से सारे धर्म दूर हो जाते हैं।

खोजत पन्थ मिलहिं नहिं धूरी। करैं क्रोध जिमि धर्महिं दूरी।

उत्तेजना किसी प्रकार की हो, वह मनुष्य को निर्बल बना देती है। यह मनुष्य के मन की कमजोरी है। हठी, स्वार्थपूर्ण और कठोर स्वभाव वाला मनुष्य ही अति क्रोधी होता है। इसलिए अपने को धैर्य्यवान, दयावान, क्षमावान दूसरे की भी सम्मति मानने का भाव, आपत्ति काल में भी मन शान्त रखना, बड़े-से-बड़े काम में भी निराश न होने का स्वभाव बनाना, धैर्य्य और शान्ति से काम लेने में क्रोध नहीं आना, जब कोई कटु बचन उच्चारण करिए तो सोच समझ कर करिए जिस से दूसरों को बुरा न मालूम हो। क्रोध आने पर शब्दों का उच्चारण ही न करिए। जब क्रोध शान्त हो जायगा तब स्वयं ही ज्ञान हो जायगा और अपने कहे हुए कटु शब्दों पर पश्चात्ताप होगा। क्रोध-वासना को शान्त करने के लिए मौन हो जाना सरल तथा साध्य उपाय है। अपने मन को सहनशील बनाना चाहिए। जरा-जरा सी बातों से मन को खिन्न न करना चाहिए। अपने ही मन के अनुकूल चलने की कोशिश न करनी चाहिए। दूसरों को कटु वाक्य न कह कर स्वयं दूसरों के कटु शब्द सह लेना चाहिए। यही सब शान्ति और नित्य सुख देने वाले सरल साध्य उपाय हैं।

काम क्रोध मद लोभ सब। नाथ नरक कर पन्थ।
सब परिहर रघुबीर पद। भजहु कहहिं सद ग्रन्थ।

योग वियोग भोग भल फन्दा। हित अनहित मध्यम भ्रम फन्दा।
जन्म मरण जह लगि जग जालू। समपत्ति विपति कर्म अरु कालू।

मोह मनुष्य के लिए बहुत ही दुःखदाई है। मिलना, बिछुड़ना, भले बुरे का भोगना, मित्र शत्रु और सदा इन्हीं में दुःखी रहना ये सब भ्रम के जाल हैं। जन्म, मरण, सम्पदा, बिपदा, कर्म करना और समयानुकूल भोगना यह सभी संसार का जाल है।

धरणि धन धाम पुर परिवारू। स्वर्ग नरक जहँ लगि व्यवहारू।
देखिय सुनिए गुनिए मन माहीं। मोह मूल परमारथ नाहीं।

पृथ्वी, घर, धन, गांव, कुटुम्ब, स्वर्ग, नरक जहां तक दुनियां की वस्तुयें हैं। उसको देखिए सुनिए और मन में बिचारिए। तो सब असत्य तथा अज्ञान ही की जड़ हैं। इनमें सत्य तथा परमार्थ कुछ नहीं है।

स्वपने होइ भिखारि नृप। रंक नाक पति होइ।
जागे हानि न लाभ कछु। तिमि प्रपंच जग सोइ।

स्वप्न में भिखारी राजा और इन्द्र दरिद्र हो जाता है परन्तु जागने पर हानि लाभ कुछ नहीं होता। ऐसे ही संसार में जो कुछ भी आडम्बर हैं सब मिथ्या हैं।

मोह निशा सब सोवन हारा। देखहिं स्वप्न अनेक प्रकारा।
यह जग यामिन जागहिं योगी। परमारती प्रपंच वियोगी।
जानहिं तबहिं जीव जग जागा। तब रघुबीर बिलास विरागा।
होइ विवेक मोह भ्रम भागा। तब रघुबीर चरण अनुरागा।

अज्ञान रूपी रात्रि में सब सोने वाले अनेक प्रकार के स्वप्न देखते हैं। सुख, दुखादि, असत्य को सत्य मानते हैं। केवल इस संसार रात्रि में योगी और संत ही जागते हैं, जो परलोक के चाहने वाले हैं। और जो लोक के चाहने वाले प्रपंच में लिपटे रहते हैं उन्हें सुख कहाँ।

जब सब विषयों और मोह से स्नेह जाता रहे। तभी जानिए कि जीव जागा है। जब ज्ञान होता है तभी अज्ञान का भ्रम दूर होकर भगवान के चरणों की प्रीति होती है। तभी सुख मिलता है। ज्ञान को स्थिर कर देखिए जो वस्तु उपजेगी उसका विनाश अवश्य होगा। पानी का बुलबुला उठके क्या सदा बना रह सकता है। उसके लिए क्या पछतावा। संसार की वस्तु अपना समझने ही से दुःख होता है। घर, प्राणी, धन सभी कुछ परमात्मा का समझिए। कर्त्तव्य सभी के साथ करने की भावना होनी चाहिए। उनके प्रेम में लिपटना ही दुःख बढ़ाना है। सत्य की खोज करके उसी में मन लवलीन करिए तब सुख मिलेगा।

सुत वित नारि त्रिविध सुख कैसे। उपजहिं जाहिं घटा नभ जैसे।
तड़ित बिदित देखिए घनमाहीं। रहैं न थिर तुरन्त छिप जाहीं।

पुत्र, धन और स्त्री तीनों प्रकार का सुख कैसा है, जैसे आकाश में बिजली की चमक है कि वह स्थिर नहीं रहती तुरन्त ही छिप जाती है। ऐसी ही मनुष्य की दशा है।

काल आने पर कोई नहीं बचेगा। ऐसी नाशवान असत्य शरीर के लिए क्या सोच। किन्तु यह मोह जाल में सभी बन्धे हुए हैं।

बिन सतसंग न हरि कथा। तेहि बिन मोह न भाग।
मोह गये बिन राम पद। होइ न दृढ़ अनुराग।

मोह बिना सतसंग के जाता नहीं। और मोह गये बिना भगवान से प्रीति नहीं होती। इसलिए सभी जन को इस झूठे जग के मोह को त्याग कर भगवान के मोह में फंसने से सुख मिलेगा।

लोभ—जो मनुष्य हर प्रकार से संतुष्ट हैं। वे भी अनियन्त्रित इच्छाएँ बढ़ाते ही चले जाते हैं। जितना धन वैभव पास में होता है। वह कम लगता है। पुत्र, पुत्री, नाती-पोता सब हो जावें सब कुछ होते हुए भी गृहस्थी की सामग्री की कमी ही मन में रहती है। तो क्या इन नित्य नई अभिलाषों की

कभी पूर्ति होगी ? बल्कि जितनी पूर्ति होगी उतनी ही इसकी जागृत होती जायगी। यह लोभ रूपी अग्नि मनुष्य को नष्ट कर डालती है। लोभ से मुक्त होने का साधन है संतोष। लोभ की अग्नि से जले हुए मनुष्य को संतोष-रूपी गंगा में स्नान करने ही से परम सुख और शान्ति प्राप्त होती है। यदि आप अपने मन के एक-एक विकार छोड़ने का नित्य अभ्यास करेंगे तो जल्द ही सुखी हो जावेंगे।

तृष्णा—यह तो मनुष्य के लिए असाध्य रोग है। इसकी तो जितनी ही पूर्ति होगी उतनी ही यह प्रज्वलित होती जायगी। मानो अग्नि में घी पड़ रहा हो। कभी-कभी तो इसी प्रकार की इच्छाएं बढ़ते-बढ़ते भिखारी ही बना देती है। आमदनी से अधिक खर्च कर के इच्छाओं की पूर्ति करने पर भी मन शान्त नहीं होता। जिसका फल बाद में यह मिलता है कि कर्जदार हो जाने से मकान जायदाद तक बिक जाती है। तब मनुष्य इसी चिन्ता की आग में जलते-जलते मरता है। आमदनी से अधिक खर्च कर देने पर हर समय चिन्ता ग्रसित करती रहती है। तृष्णा निवृत्त के लिए संतोष धारण करिए। जितनी वस्तु आप के पास है उसी में काम चलाइए। अपनी आवश्यकताओं को अधिक न बढ़ाइए। अपनी आमदनी के अन्दर ही व्यय करिए। तब चिन्ता से बचत होगी। और तभी चिन्तामुक्त रह कर सुखी रहिएगा। किन्तु इस अज्ञान से अन्धकारमय संसार में इन दुःख से बिरला ही कोई बचा होगा।

मोह न अन्ध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचावन कोही।
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहीं दाहा।

मोह ने किसे अन्धा नहीं किया। कौन ऐसा है जिसे कामदेव ने नहीं सताया। और तृष्णा ने किसे पागल नहीं बनाया तथा क्रोध ने किस का हृदय नहीं जलाया।

ज्ञानी तापस शूर कबि। कोबिद गुण आगार।
केहि कै लोभ बिडम्बना। कीन्ह न यहि संसार।

लोभ की इतनी प्रवल माया है कि ज्ञानी, तपस्वी, पंडित, आदि की भी दुर्दशा हो जाती है।

व्यापि रहेउ संसार महुँ। माया दम्भ कपट प्रचण्ड।
सेनापति कामादि भट। दम्भ कपट पाखण्ड।

आधुनिक युग में माया की बड़ी घोर सेना फैल रही है। जिसमें कपट, छल, कामदेव, और पाखण्ड आदि जैसी सेनायें हैं।

छूटै न राम कृपा बिन। नाथ कहों पद रोपि।

सभी को मालूम है कि यह माया आदि विकार सब झूठें हैं किन्तु यह बिना राम जी के कृपा के नहीं छूटते।

काम क्रोध मद लोभ रत। गृहा सक्र दुःख रूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिह। मूढ़ परे तम कूप।

काम, क्रोध, मद, लोभ में पड़े घर के प्रेमी दुःख रूपी संसार कुऐं में पड़े हैं। अब वह मूढ़ भगवान को कैसे जाने। जब अपने ऊपर प्रभु की असीम कृपा होगी तब सतसंग प्राप्त होगा। तब हृदय के ज्ञान चक्षु खुलेंगे तभी सारे दुःख दूर होकर सुख मिलेगा।

**राग द्वेष**—आपस में फूट कराना और झगड़ा करना घरेलू कलह की जड़ है, यह चित्त का राग द्वेष है। इसी के द्वारा न जाने कितने घरों की क्षति हो गई। सुख सदा के लिए विलीन कर दिया गया। घरों में कलह प्रायः आपस के सास बहू के अनुचित व्यवहार से शुरू होती है। शायद ही कोई सौभाग्यशाली घर हो जो इससे छूता बचा हो। यदि बहू अपने अधिकारों पर बल देने का साहस तथा तीव्र स्वभाव की है। तब यह संघर्ष प्रगट होकर उग्ररूप धारण करता है। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रक्खी जा सकती हैं। यदि अनपढ़, गमखोर, सहनशील, साहसहीन बहू आ गई तब तो उस पर अधिकार जमाने का पूरा मौका मिला। बहू आने पर सास को अपने पारिवारिक कार्यों की इति श्री हो गई। सास समझती है कि मेरा अधिकरा

है बहू पर रोब झाड़ कर काम लेना, स्वयं ब्यासगद्दी पर बैठ के सारा बोझा बहू के कोमल करों और अनुभव शून्य कन्धों पर डाल कर आज्ञा देना और बात-बात पर व्यंग कसना अपना परम धर्म समझती हैं। घर की अन्य स्त्रियाँ नन्द आदि भी इस प्रवृति की पूर्ति कर हां में हां मिलाती हैं। यदि पति भी इसी के अनुयायी तथा माँ के भक्त मिले तो वह भी अपने व्यंगवाण छोड़ने में नहीं चूकेंगे। ऐसे अन्धविश्वासी पति के कान भर कर सास नन्द उनका दिमाग ही फेर देती हैं। वह असहाय अबला और भी दुःखी होती है। सास तब अपने दिल का उदगार प्रगट करती हैं कि मेरा लड़का सतयुगी है वह औरत के कहने में नहीं आने का। कहीं कहीं तो सासें उग्ररूप धारण कर लेती हैं। यदि बहू का लड़का भी मर गया हो उस समय भी उसे व्यंग बोलने और ताना कसने से नहीं चूकती। उसके दुःख की कुछ परवाह नहीं। अपने सुख में लवलीन मानों उनका वह औलाद ही नहीं। जब सासों की टोली इकट्ठा होगी तो बहू की निन्दा के नारे लगेंगे। कहीं-कहीं तो यह भी कलुषित प्रभाव प्रगट किया जाता है कि जिससे पति का हृदय पत्नी से न मिले तो मेरा ही सारा शासन चलें बहू पर अधिक-से-अधिक दमन चक्र चलाना चाहती हैं। कोमल हृदया बहू मैके में प्यार और आजादी से रहने वाली अभी उसकी आदत नहीं पड़ी है कठोर शब्द सुनने की वह लाचार अबोल-बाला की छोटी-छोटी गलतियों पर कड़ी आलोचनायें की जाती हैं। बहू अन्दर-ही-अन्दर कुढ़ती जलती हुई सब बातों को सहन करती है। यही उत्तेजना बढ़ कर मानसिक अनेक बिकारों के रूप में प्रगट होती हैं और अनेकों रोगों की शिकार होती है। इस दुर्व्यवहार के परिणाम स्वरूप उसका हृदय भी अपने बुजुर्गों के प्रति अनादर बिद्रोह की भावना उत्पन्न करेगा। असली प्रीति समाप्त होके ऊपरी प्रीति रहेगी। घर में जो औलादें होंगी वे भी दूषित वातावरण के कारण बुद्धिहीन होंगी।

जल पय सरिस बिकाय। देखहु प्रीति की रीति भल।<br>
बिलग होय रस जाय। कपट खटाई परत ही।

स्नेह की कैसी अच्छी रीति है। जल दूध के मेल से एक ही भाव बिकता है परन्तु कपट रूपी खटाई पड़ते ही दूध पानी अलग हो जाता है। कपट प्रेम को अपने सगे स्नेही से भी अलग कर देती है। कितने ही घर अब तक उसी अंधेरे कूप में पड़े हैं जो अपने गृह के पतन की ओर ध्यान नहीं देते कि आपस में कितना प्रेम होना चाहिए। एक दूसरे के प्रति सदभाव न होने के कारण द्रोह पैदा हो जाता है। जो दोनों के सुख का कांटा तथा गृह नरक समान हो जाता है।

हमारा पूर्वज कितना आदरणीय था श्री मानस जी की एक-एक चौपाई अमूल्य है जो अपने को मोती ऐसा उज्ज्वल बनाने की शिक्षा देती है। यदि उन पर ध्यान दिया जावे तब गड्ढ़े में गिरने से बचें। और कलुशित हृदय भी न बने। जब राजा दशरथ श्री रामजी को व्याह कर लाये थे तब रानियों सहित कितने प्रसन्न थे। वह आनन्द कहा ही नहीं जा सकता।

लिए गोद कर मोह समेता। को कहि सकै भयो सुख जेता।
बधू सप्रेम गोद बैठारी। बार बार हिय हरषि दुलारी।
नृप सब भाँति सबहिं सनमानी। कहि मृदु बचन बुलाई रानी।
बधू लरिकिनी पर घर आई। राखेहु नयन पलक को नाई।

राजा दशरथ ने सब प्रकार से आदर किया। और कोमल बचन कह कर रानियों को बुलाया। उनसे कहा ये आई हुई बहुयें पराये घर की बेटियां हैं। इन्हें बहुत ही प्यार करना जैसे आँखों की पुतली। आदर्श कौशिल्या माता ने ऊपर कहे अनुकूल ठीक उसी भाँति सच्चा प्रेम दर्शाया था।

मै पुनि पुत्र बधू प्रिय पाई। रूप राशि गुण शील सुहाई।
नयन पूतरि इव प्रीति बढ़ाई। राखहु प्राण जानकिह लाई।

रूप की राशि गुणवती सुशील सुन्दरी सीता बहू को पाकर उन्हीं पर अपने प्राण लगाये रहती हूँ और उन्हें नैयनों की पुतली के समान समझती हूँ।

कल्प बेलि जिमि बहु बिधि लाली । सींचि स्नेह सलिल प्रति पाली ।

कल्प बेलि की तरह बहुत प्रकार से प्यार किया और प्रेम के जल से सींच कर पाला है ।

पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा । सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा ।
जीवन मूरिजिमि जुगवति रहेऊँ । दीप बाति नहिं टारन कहेऊँ ।

पलंग, गोद, तथा हिन्डोला को छोड़ कर कभी कठोर पृथ्वी पर पैर नहीं रखने दिया । जीवन ज्योति की भाँति सदा रक्खा । चिराग की बत्ती हटाने तक को नहीं कहा इतना सोच कर कौशिल्या जी व्याकुल हो जाती हैं कि सीता जी बन में कैसे रहेंगी । कितना अगाध प्रेम इन चौपाइयों से प्रतीत होता है । और ठीक उसी के बिपरीत यह आधुनिक युग होता जा रहा है इस पर बिचार करने की आवश्यकता है क्योंकि अधिकतर गृह दूषित व्यवहार के कारण नरकवत होते जा रहे हैं । सासें अपनी अयोग्य संतान के प्रति जो सहज स्नेह रक्खेंगी वह अपनी योग्य सुशील बहू के प्रति उतना प्रेम नहीं करेंगी । अयोग्य संतानों के प्रति प्रेम तो अपने रक्त सम्बन्ध की घनिष्टता से है । और बहू के प्रति दुर्व्यवहार अपने दूषित भाव पर होता है । लेकिन क्या यह ठीक है ? सास बहू को अपनी लड़की की भाँति जाने और बहू सास को माँ की भाँति जाने तो क्या सच्चे प्रेम की स्थापना होने में कोई कठिनाई पड़ेगी ? बाग का माली यदि सभी पेड़ों को बराबर सींचेगा और सभी पेड़ों को काट छाँट बराबर करता रहेगा तब उद्यान लहलहाता हुआ कैसा सुन्दर प्रतीत होगा, उसी भांति यदि मां अपने पुत्र, पुत्री, नाती, पोता बहू को समान समझेगी कपट रहित व्यवहार सब के साथ शुचि सरल सच्चा प्रेम रक्खेगी तभी आदर्श गृहस्थी होगी बच्चे भी सभी न्यायकारी ही होते जांयगे । सास की पदवी प्राप्त होने पर उच्च पदवी को अधिकारी हो जाती हैं, किन्तु जब तक उच्च भाव नहीं होंगे उच्च पदवी बेकार है । नारी जगत जननी है । सब संसार को एक समान जानना चाहिए न कि हृदय में इतनी जगह को कमी कि अपने ही पुत्र को और भाँति पुत्री और बहू के प्रेम में और भाव ।

बड़े स्नेह लघुन पर करही ।

बड़े आदमी छोटों पर स्नेह करते ही हैं । छोंटा यदि अनुचित कार्य कर दे तब भी बड़ों को क्षमा करके उनका प्यार करना ही धर्म है ।

जो लरिका कछु अनुचित करहीं । गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं ।

जब लड़के कुछ अनुचित कर डालते हैं तब गुरू माता पिता दुतकारते नहीं बल्कि प्रसन्न चित्त होके उन्हें समझा देते हैं । वही मां तो आप भी हैं । एक मां की गोद छोड़ कर बहू आप के गोद में आ गई उससे राग द्वेष कैसा । वही तो आप के सामूहिक परिवार की संरक्षक बनेगी । परिवार की वृद्धि-कारणी होगी । पुत्र के सारे सुखों की देने वाली चिरसंगनी बनेगी । घर का संरक्षण करके स्वर्गधाम बनावेगी । पर यह कब आदर्श बहू बनेगी । जब आप उसे प्रेम जल से सींचेगी । तब वह आदर्श गृहिणी बन कर आपके परिवार और समाज की उपयोगी सेवा करके सभी का आनन्दमय जीवन बनायेगी । नारियों ने कितने बड़े-से-बड़े महान कार्य कर डाले और आधुनिक युग में भी महान शक्ति है । अरे उन्हीं आदर्श शक्तिशाली नारियों ही की बंशज तो सभी नारियां हैं । तब उस शक्ति को क्यों क्षीण करें कि अपने ही परिवार को सुरक्षित न रख सकें, घर कलह का केन्द्र बन कर गिरता चला जावे, तब भाग्य को कोसा जावे कि बहुओं ने आके घर बिगाड़ दिया । महिलाओं को चाहिए कि अब अज्ञान को दूर करके अपने घर को आनन्द-मय बना के सुखमय जीवन बनावें । जब घर आनन्दमय हो जायगा तब आगे चलकर आप समाज और राष्ट्र को भी अपना समझ कर संसार के लिए भी कुछ कर सकेंगी तथा ईश्वर को भी प्राप्त कर सकती हैं । अब राग द्वेष और कुमति रूपी शत्रु को हृदय से निकाल कर के सद्भाव ग्रहण करिए । अपना और बहू, लड़के का गृहस्थ जीवन सुखमय बना कर शान्ति सुख से जीवन व्यतीत करिए ।

झूंठ—यदि मनुष्य झूंठ बोलने का आदी है तब क्या पूंछना । अनेकों भांति का पाप करके झूंठ बोल कर पाप छिपा कर अपना मुख उज्ज्वल कर लेना

कोई आश्चर्य की बात ही नहीं। उसके फल स्वरूप पापों का बोझा दिन प्रति दिन बढ़ता ही चला जावेगा। और उस पाप बोझ से नैय्या शीघ्र ही डूब जायगी। तब त्राहि त्राहि मचेगी। लोक परलोक दोनों ही बिगड़ेगा। झूँठ एक थोड़े से पाप के कारण पाप का मूल कितना बढ़ता जायगा। मनुष्य अब झूँठ बोलने का इतना अनुयायी होता जा रहा है कि बड़े संकट को छोड़िए, हँसी मजाक में झूँठ बोलते हैं। अन्दर बैठे हैं कहला दिया कह दो बाबू साहब घर पर नहीं हैं। परिणामतः अपने बच्चे भी झूँठ बोलने के आदी होंगे। जिससे कहलाया जायगा वह भी घृणित भाव से सोचेगा कि इतना सफेद झूँठ बोले, तत्पश्चात उसका भाव अपनी ओर से दूषित होगा। अनेकों हानियां झूँठ बोलने से होंगी। मनुष्य छोटी छोटी बातों पर झूँठ बोल कर अपनी आदत झूँठ बोलने की बना लेता है तब वह सदा झूँठ बोल कर बड़ा सा बड़ा अनुचित कार्य कर के भी झूँठ बोलता है उसके फल स्वरूप अनेकों आपत्तियां झेलता है।

यदि मनुष्य सत्यभाषी है और अनेकों पाप करने वाला है, फिर भी वह घोर पाप करेगा मन के दूषित भाव द्वारा और बाद में सब सत्य-सत्य कह देगा तो उसके पाप क्षीण होते जांयगे। तथा उसकी बुरी आदतें भी छूटती जायँगी और पाप करके जो झूँठ बोलेगा तब पाप बढ़ेंगे, धर्म क्षीण होगा। इसलिए झूँठ का त्याग करके सदा सत्य बोलने की प्रतिज्ञा कर लीजिए। अपने आप ही से सारे पाप दूर होकर मन निर्मल स्वच्छ हो जावेगा। तब कोई पाप करने को नहीं चाहेगा।

मन के एक-एक बिकारों द्वारा कितनी हानियां हैं। जो कि जीव को सुखी नहीं रहने देतीं। अपना शरीर तो सारा मन के विकारों द्वारा ग्रसित है तब सुख शान्ति कैसे मिल सकती है।

> मोह सकल ब्याधिन कर मूला। तेहिते पुनि उपजै बहु शूला।
> काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।

सब रोगो की जड़ मोह (अज्ञान) है उसी के कारण सब क्लेश उपजते हैं।

काम, क्रोध, लोभ, पित्त हैं जिससे छाती हर समय जला करती है। और हृदय में इतना अंधकार छा जाता है कि कुछ सुझाई ही नहीं देता कि हमको क्या करना चाहिए और हम क्या कर रहे हैं।

प्रीति करैं जो तीनों भाई। उपजै सन्निपात दुखदाई।
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब शूल नाम को जाना।

यदि मनुष्य काम, क्रोध लोभ इन तीनों से प्रीति करे तो दुखद सन्निपात रोग खड़ा हो जाय। नाना प्रकार के विषयों की इच्छा भयंकर शूल पीड़ा है। उनकी तकलीफें बताना बहुत ही कठिन है।

ममता दाद कण्डु ईर्षाई। हर्ष बिषाद गहर बहुताई।
पर सुख देखि जरनि सो क्षई। कुष्ट दुष्टता मन कटिलाई।

ममता दाद है। डाह खाज है। दूसरों का सुख देख कर जलना क्षयी रोग और मन का टेढ़ा मन-दुष्टता कोढ़ है।

एक ब्याधि नर मरहिं। ये आसाध्य बहु ब्याधि।
संतत पीड़हिं जीव कह। सो किमि लहैं समाधि।

एक रोग से तो नर मर ही जाते हैं। फिर ये तो अनेक मन के बिकार वाले रोग उपाय रहित हर समय शरीर को पीड़ा पहुंचाया करते हैं तो भला जीव कैसे सुख और शान्ति पा सकता है।

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारण ही।
लघु जीवन संबत पंच दशा। कलपांत न नाश गुमान अशा।

मनुष्य रोग से पीड़ित हैं। सुख नहीं। पर अभिमान भरा है। बिना कारण ही बैर उठाते हैं। जीवन तो केवल चन्द दिन का है। पर भाव यह है कि मानों हम कलपान्तों तक जीवित रहेंगे।

भगवान के चरणों में अब स्नेह करके अपने हृदय से छल कपट आदि बिकार हटा कर इस मोहरूपी रात्रि से जागो। इस तरह से सोते बहुत दिन

व्यतीत हो गये। अब जीवन के जो शेष दिन हैं उतने दिन के लिए तो अपने मन के सारे मलिन आवरणों को हटा कर अपना मन स्वच्छ निर्मल बना कर संसार में सुख से रहिए।

यदि कमरा अंधेरा पड़ा है उसमें से कोई वस्तु लेने की आवश्यकता है। पर तमाम कठिनाइयां उठाने पर भी चीज का मिलना दुर्लभ है जब तक कि रोशनी नहीं होती। रोशनी होते ही चीज तुरन्त मिल जायगी उसी प्रकार जब मनुष्य के हृदय में ज्ञान दीप जल जायगा तब वह अज्ञान का तिमिर दूर हो जायगा। स्वयं अपनी बुराइयां प्रतीत होने लगेंगी और अपने से घृणा होगी कि हम अधर्म की राह पर चल रहे हैं। जब हृदय में पश्चाताप का वेग उठेगा तभी हृदय में ज्ञानज्योति प्रकाशित होगी। ज्ञानदीप के जलते ही हृदय का अंधकार दूर होकर अपने सभी पाप भी दूर हो जायँगे और दुग्ध सा स्वच्छ मोती सा उज्ज्वल होकर चमकने लगेगा। अपना जीवन सरल पर-उपकारी नीति वाला हो जायगा।

गन्दे शीशा के सामने खड़े होकर अपना मुँह देखना चाहते हैं किन्तु गन्दे दर्पण में मुंह देखना असम्भव है उसी भाँति यह मनुष्य शरीर कितना ही सुन्दर सौम्य आकर्षण चमकता हुआ हो, किन्तु ऊपरी चमक दमक से लाभ नहीं मिल सकता है जब मन की मलीनता दूर करने के उपरान्त ज्ञान-दीप प्रकाशित होकर बुद्धि तीव्र होगी, तभी सुख मिलेगा। और तभी प्रतीत होगा कि जब मन विकारों से भरा था तब कितनी उलझनें और अशान्ति थी और सब विकारों का त्याग कर अब कितनी शान्ति प्राप्त हुई।

विज्ञान के द्वारा अनेकों वस्तुओं का निर्माण हुआ जिससे संसार ऊँचे शिखर पर चढ़ता जा रहा है। जहां पर बिलकुल बीरान था वहां अनेकों मशीनों का अविष्कार हो गया। जो बिलकुल अनपढ़ मूर्ख थे वे चतुर विद्वान ज्ञानी बन गये, विद्या पढ़ कर। तब क्या मनुष्य अपनी बुराइयों को सुधार कर स्वयं ऊंचा नहीं उठ सकता कि जिससे दुःखों से छुटकारा पाकर सुख की प्राप्ति कर लेवे।

जिस प्रकार कोई डिगरी प्राप्त करके रिसर्च करते हैं तभी पूर्ण योग्यता की प्राप्ति होती है। उसी भाँति इन्द्रियों को बस में करके अपने एक-एक विकारों के छोड़ने का दृढ़ संकल्प कर लीजिए कि हम एक साल तक क्रोध नहीं करेंगे। जितना भी क्रोध करने का अवसर आने पर उस दृढ़ संकल्प के ऊपर डटे रहिए। क्रोध को मसोस कर शान्तिपूर्वक सहन करना है। इसी भाँति सभी बिकारों को तजने की अवध रख कर प्रण कर लीजिए और धीरे-धीरे समय को बढ़ाते जाइए, इसी भाँति रिसर्च करते-करते वह दिन शीघ्र आ जावेगा, कि मन के सारे विकार दूर हो जांयगे और जीवन में सदा सुख शान्ति रहेगी।

ज्ञानियों का कहना है कि अच्छे कर्म करो। पर उसके फल पाने की आशा मत करो। फल पाने का लोभ त्यागने में ही सुख है। सुख पाने की खोज में बावले होकर घूमने में सुख नहीं मिलेगा। बल्कि कर्मशील कर्त्तव्यपरायण बने रह कर ही सुख मिलेगा। यदि दुःखों को धैर्य्य से सहन कर लेते हैं, तब आप सुखी रहेंगे, जो मनुष्य अपने परिवार, देश और समाज को सुखी बनाने का प्रयत्न करता है। और अपने सुखों को भूल कर दूसरों के लिए जीता है। वही सदा सुखी और जीने का सच्चा आनन्द उठा सकता है।

मानव जीवन एक ईश्वरी पवित्र धरोहर के रूप में है प्रत्येक मनुष्य के अन्तर में चैतन्य प्रभू का तत्व है। इसलिए मानव देह को एक मन्दिर की तरह शुचि, निर्मल, मंगलमय माना गया है। जिसमें ईश्वर वास करता है। आगे भी मैं मन के विकारों के दूर करने के हेतु आलोचना कर चुकी हूँ और फिर उन मूल तत्वों को बतलाती हूँ जिन्हें प्राप्त करके हम सभी लोग जीवन को सुखी और संतोषमय बना सकते हैं। यह वह मूल तत्व है जिसकी हमें दैनिक जीवन में आवश्यकता होती है और जिसके सहारे हम अपनी जीवन-यात्रा सफल बना सकते हैं।

पहिली बात—स्वास्थ्य इतना अच्छा होना चाहिए कि हम अपने काम काज में रस ले सकें ताकि जीवन का आनन्द उठा सकें वह हमें बोझ न

मालूम पड़े। यह १५, २० मिनट व्यायाम और खान-पान के नियम से प्राप्त हो सकता है।

दूसरी बात आर्थिक स्थिति—वह कम से कम इतनी दृढ़ तो होनी ही चाहिए कि हम अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। विशेष कर दुर्भाग्य की बात को छोड़ दीजिए। साधारणतः बुद्धिमानी और मेहनत से यह प्राप्त हो सकता है।

तीसरी बात—मुसीवत पड़ने पर मुकावला कर सकें घबड़ाय नहीं बल्कि उन पर विजय प्राप्त कर सकें। यह शक्ति शारीरिक, मानसिक और नैतिक होती है। जिन्दगी में मनुष्य के ऊपर मुसीबतें आना भी अनिवार्यतः ही है पर अपना कल्याण सुख और सफलता है। उन्हें धैर्य से सहन करने में ही है, उनसे घबड़ाने और रोने में नहीं है।

चौथी बात—अपनी की हुई गलतियों को कबूल करने की आदत डालना। यह दोष तो सब मनुष्यों में अधिकतर होते हैं। पर अपनी गलती स्वीकृत करने की शक्ति बहुत कम में होती है। यह शक्ति हम बटोर सकें तो प्रत्येक आत्मस्वीकृत या पश्चाताप के बाद हमारा मन शुद्ध और साफ हो जायगा भावी सफलता के लिए शक्तिदायक है। घरेलू झगड़े मिट कर शान्तिमय हो जावेंगे।

पाँचवीं बात—धीरज—किसी भी कार्य या लक्ष्य की सफलता के लिए परिश्रम करना पड़ता है। और उस परिश्रम का फल मिलने में समय लगता है। तब तक धैर्य्य रख कर बराबर परिश्रम करना चाहिए। तभी सफलता प्राप्त होगी यदि घबड़ा कर बीच में छोड़ दिया गया तो वह कार्य अधूरा ही रह जायगा।

छठवीं बात—उदारता हो ताकि हम दूसरे के गुणों को भी देख सकें। दोष तो हमें खूब दीखते हैं खास कर जब वे औरों के हों। और अपने स्वयं

[illegible] नहीं दीखते [illegible] के बजाय गुण देखें और उनकी कद्र कर सकें। तो [illegible] के बीच का दुराव बैरभाव कम हो जावे।

सातवीं बात—श्रद्धा—श्रद्धा प्रेम के आधार पर ही यह ईश्वर-निमित्त सौन्दर्य है। और लोक में सब से भावपूर्ण प्रेम को करे यही चमत्कार है जिससे हम सब साक्षत्कार लाभ उठा सकते हैं। श्रद्धाहीन जीवन बिना खेवनहार जहाज की तरह है जो कि किसी भी तूफान में टकरा कर चूर चूर हो सकता है।

आठवीं बात—आशा—दृढ़ आशावादी मनोवृति ही हमें भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त रख सकती है। आशा और विश्वास पर तो दुनिया कायम है सब मन के विकार दूर हो जावें और इन आठ गुणों के खम्भे पर ही हमारे जीवन मन्दिर की इमरत खड़ी है। यदि ये खम्भे मजबूत रहें और मन के सारे विकार दूर हो जावें तो कोई कारण नहीं कि हम सुखी न हों। इन्हीं बातों के आधार पर चलने से हमारा जीवन अवश्य ही सुखमय हो जायगा।

———

# आपस का उत्तम व्यवहार

मानव की वर्तमान परिस्थितियों को देख सोच कर शान्त मन उलझ कर अशान्त बन जाता है। क्योंकि मनुष्य के सुख साधन के लिए अब बहुत ही अत्यधिक साधनों का निर्माण हो गया है। जिस से मनुष्य अनेकों लाभ उठा कर सुख पा सकता है, विद्या पढ़ कर ऊँची ऊँची डिगरियां प्राप्त कर के विद्वान भी अधिक हैं। भाग्यवान जन धन भी अधिक कमा रहे हैं। पहिले की अपेक्षा अब घर का साजधाज भी विलक्षण आकर्षणमय है। पुत्र, नाती, पोता, परिवार, आदि से परिपूर्ण घर है। किसी प्रकार की कमी नहीं है किन्तु तिस पर भी पहिले की भाँति घर में सुख शान्ति नहीं है न जाने क्यों वह आनन्द रस नहीं आता, नीरसता ही टपकती है। मानव चिन्ता में ही ग्रसित रहता है।

यह क्यों इस बिषय को सोच कर हल करना है। और देखना है कि अब क्यों सब जन सुख से बंचित रहते हैं। सब प्रकार के सोचने से यही प्रतीत हो रहा है कि आपस का व्यवहार बहुत दूषित हो गया है। इसी लिए सुख शान्ति दूर हो गई। और मानव का चित्त उलझनों से घिर गया है। घरों में उचित ढंग का और बड़ों का आदर भाव करने में कमी आ गई, बड़े क्षमावान नहीं रहे, दया का भी अभाव होता जा रहा है। परस्पर में सच्ची प्रीति नहीं रही।

सुखो मीन सब एक रस। अति अगाध जल माहिं।

जैसे कि मछली जब अधिक जल में रहती है तभी वह सुखी रहती है। उसी भाँति जब मनुष्य अपने घर, परिवार, समाज में अगाध प्रेम रखते हुए जीवन निर्वाह करते हैं तभी वह अधिक सुखी रहते हैं। रस्सी जितनी अधिक

लटें छोड़ कर बटी जायगी उतनी ही ज्यादा मजबूत होगी, और मनुष्य जितना ही संगठन सहित आपस में प्रेमभाव से रहेगा वह उतना ही अधिक सुखी रहेगा। करुणानिधान भगवान स्वयं ही सदा यह ध्यान रखते थे कि जिससे सब लोग सुखी रहें वही करना चाहिए।

जेहि बिधि सुखी होहिं सब लोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संयोगा

श्री राम जी अपने छोटे भाइयों और मित्रों सहित प्रेम से भोजन करते और सदा माता पिता की आज्ञानुसार चलते थे।

अनुज सखा युत भोजन करहीं। मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं।
बेद पुराण सुनहिं मन लाई। आप कहहिं अनुजहिं समुझाई।

जिनके कि श्रीमुख से ही सब बेद पुराण निकला था वही प्रभु अपने बड़ों और गुरू जी से मन लगा कर आदर सहित बेद पुराण सुनते तथा अपने भाइयों को नीति समझाते थे कि इसी पथ पर चलना चाहिए।

सुन जननी सोइ सुत बड़भागी। जो पितु मातु चरण अनुरागी।
तनय मातु पितु पोषण द्दारा। दूर्लभ जननि सकल संसारा।

संसार में वही पुत्र भाग्यवान है जो अपने माता पिता के चरणों में प्रीति कर के सदा सेवा करता हो। वही पुत्र धन्य है। और ऐसा पुत्र अब आधुनिक युग में मिलना दुर्लभ है। माँ की आज्ञा पाकर सारा राज्य का सुख छोड़ कर राम बन को सिधारे थे।

आज ऐसा अमूल्य ग्रन्थ सब के हाथ में होते हुए भी सभी लोग नीति से बंचित होते जा रहे हैं। आपस की प्रीति तथा नीति की कमी होती जा रही है। तभी कलह और द्रोह बढ़ता जा रहा है मन में यह बिचारधारा जागृत होती है कि उस भाई के पास अधिक धन है यह हमी को मिलता तो अधिक अच्छा था और भगवान सोचते हैं कि :—

जनमे एक संग सब भाई। भोजन शयन केलि लरकाई।
कर्णबेध उपवीत विवाहा। संग संग सब भये उछाहा।
बिमल बंश अनुचित एका। अनुज बिहाय बड़ेहि अभिषेका।

हम चारो भाई एक ही साथ जनमे और लड़कपन में साथ साथ भोजन किया तथा खेले। एक ही साथ कर्णछेदन, जनेउ, विवाह आदि हुआ। तब इससे अब यह अनुचित है कि छोटे भाइयों को छोड़ कर बड़े ही को राज्य तिलक हो। हमको इसमें खुशी नहीं होगी बल्कि चित्त में महाग्लानि होगी।

श्री रामचरित्र मानस में जीवन का एक एक विषय गूढ़ तत्व से भरा है यदि उसकी शिक्षा हृदय में बैठ जावे तो यह मानव जीवन सफल हो जावे। राम राज्य वर्णन पढ़ कर हृदय उल्लासित हो जाता है। तब उस समय कितना आनन्द रहा होगा। सब छोटे बड़ों का उचित व्यवहार, सब में परस्पर प्रीति, सब धर्म में लीन, कोई दरिद्र नहीं, कोई मूर्ख नहीं, सब ज्ञानी विद्वान थे।

यदि आज भी गृह के सभी लोग एक दूसरे के प्रेम में पगे हों। पुत्र माता पिता का आज्ञाकारी हो। पति पत्नी एक दूसरे से पूर्णरूप से प्रेम करें। अन्य जितने सम्बन्धी हों सब एक दूसरे से सदभाव रक्खें और एक दूसरे के सुख दुख में हाथ बटावें तो कितना आनन्दमयी जीवन व्यतीत हो। हमारे शास्त्रों में सभ्यता के इतिहास भरे पड़े हैं। जब एक सीधा रास्ता मालूम करने की युक्ति मेरे पास है तब हम जंगली कटीले मार्ग से क्यों चलें। जिससे दरदर पर ठोकर खाना पड़े। और परिश्रम करने पर भी वह सरल तथा सुगम मार्ग न पा सकें। क्या यह कभी ध्यान दिया जाता है कि हम सब अनुचित व्यवहार एक दूसरे के प्रति कर रहे हैं। जिसके कारण गृह में अब वह आनन्द और सुख शान्ति नहीं है। यदि अब तक नहीं सोचा तो अब कब तक अज्ञानता की गोद में पड़े सोया करोगे। उठो देखो मूर्खता और कुमति का बादल चारो ओर से घिरा है जो अपना असली मातृत्व दिखलाई नहीं देता कि किस तरह का व्यवहार होना चाहिए था और अब

क्या हो रहा है, अपनी आर्थिक दशा पर बिचारिए। और अब से स्वयं अच्छा बर्ताव करें और बच्चों को उचित शिक्षा दीजिए कि राम राज्य ऐसा बर्ताव करके सुख उठावें।

राम राज बैठे त्रैलोका। हर्षित भयो गयो सब शोका।
बैर न करहिं काहु सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।

श्री राम जी के राज्य में तीनों लोक में प्रसन्नता थी। सब लोग खुश थे सब का दुःख तो चला गया था। बैर कोई किसी से करता ही नहीं था राम जी की दया से सब का हृदय साफ था।

बर्णाश्रम निज निज धरम। निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं। नहिं भय शोक न रोग।

सब अपने वर्ण धर्म में प्रीति करते और बेद मार्ग पर चलते थे इसी से सदा सुख पाते थे। डर, शोक रोग तो था ही नहीं।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहिं पावा।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।

ईश्वरी दुःख, तथा जीवों से उत्पन्न कलह राम जी के राज्य में किसी को नहीं हुआ। सब परस्पर स्नेह करते और बेद की रीति से अपने धर्म पर चलते थे।

चारिउ चरण धर्म जग माही। पूरि रहा सपनेहु अघनाही।
राम भक्ति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।

संसार में चारो ओर धर्म ही धर्म था। स्वप्न में भी पाप नहीं था। स्त्री पुरुष सभी राम जी की भक्ति में लगे रहते थे। इसी से परम गति के अधिकारी थे।

अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुन्दर सब निरुज शरीरा।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न हीना। नहिं कोउ अबुध न लक्षण हीना।

थोड़ी अवस्था में किसी की मृत्यु नहीं होती थी। न कुछ क्लेश होता था। देह सदा निरोग रहती थी। कोई दरिद्र नहीं न कोई मूर्ख ही था। न कोई लंगड़ा, लूला, अन्धा ही होना था।

सब निर्दम्भ धर्म रत पंडित धरणी। नर अरु नारि चतुर शुभ करणी।
सब गुणज्ञ सब पंडित ज्ञानी। सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी।

संसार में कोई पाखन्डी नहीं। सब धर्म में प्रीति युक्त चतुर और सुकर्म करने वाले थे। सब गुणों के ज्ञाता पंडित ज्ञानवान परउपकार करने वाले थे।

सब उदार सब पर उपकारी। द्विज सेवक सब नर अरु नारी।
एक नारि व्रत रत नर भारी। ते मन बच क्रम पति हित लागी।

सब दयावान, परउपकारी ब्राह्मणों के सेवक और सब एक ही स्त्री के बर्ती थे। स्त्रियां भी मन बचन कर्म से अपने पति की हितू बनी रहती थीं।

पति अनुकूल सदा रह सीता। शोभा खानि सुशील बिनीता।
जानति कृपा सिन्धु प्रभुताई। सेवति चरण कमल मन लाई।

शोभा की खानि श्री सीता जी सदा पति के अनुकूल चलती थीं श्री राम जी की प्रभुता जानती थीं। उनके चरणारबिन्द में मन लगा कर सेवा करती थीं।

यदपि गृह सेवक सेवकिनी। सब प्रकार सेवा विधि लीनी।
निज कर गृह परिचर्या करहीं। रामचन्द्र आयुस अनुसरहीं।

घर में अनेक दासी दास होते हुए सब प्रकार से सेवा और घर का सब काम स्वयं करती थीं और श्रीराम जी की आज्ञा सदा मानती थीं।

जेहि विधि कृपासिन्धु सुख मानहिं। सोइ सिय सेवा बिधि उर मानहिं।
कौशिल्यादि सासु गृह माहीं। सेवहिं सबै मान मद नाहीं।

जिस प्रकार कृपासिन्धु सुख मानते हैं। वैसे ही सीता जी मन लगा कर

वही कार्य करती हैं। अहंकार से रहित सब सासुओं और गृह के सब जनों की सेवा करती थीं।

जाकी कृपा कटाक्ष सुर। चाहति चितवन सोय।
राम पदार विन्द रति। करति स्वाभवहिं खोय।

जिसकी कृपा कटाक्ष वाली चित्त वृत्ति देवता चाहते हैं। वही सीता जी अपने रूप को भुला कर राम जी के चरणारविन्द में ही प्रीति करती हैं।

सेवहिं सानुकूल सब भाई। राम चरण रत प्रीत सुहाई।
प्रभु पद कमल विलोकत रहहीं। कबहु कृपाल हमहिं कुछ कहहीं।

सब भाई राम जी के चरणों में प्रीति करते थे उनकी इच्छानुसार सब काम करते थे। वे प्रभु के चरण कमल देखते ही रहते थे सोचा करते थे कि प्रभू हमें कुछ आज्ञा दें।

राम करहिं भ्रातन पर प्रीती। नाना भांति सिखावहिं नीती।
हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा।

श्री रामजी भाइयों पर स्नेह करते थे और न्याय सिखाया करते थे। नगर के सभी लोग प्रसन्न थे। और वे वह सुख भोगते थे जो देवताओं को दुर्लभ था

प्रातःकाल सरयू करि मज्जन। बैठहिं सभा सन्त द्विज सज्जन।
बेद पुराण बशिष्ठ बखानि। सुनहिं राम यद्यपि सब जानहिं।

श्री राम जी सबेरे सरयू में स्नान कर साधू ब्राह्मणों और सज्जनों के साथ सभा में बैठते थे। बशिष्ठ जी बेद पुराण कहते थे और कृपालु भगवान उसको बैठ के सुनते थे।

अनुजन संयुक्त भोजन करहीं। देखि सकल जननी सुख भरहीं।
भरत शत्रुहन दोनों भाई। सहित पवन सुत उपवन जाई।

छोटे भाइयों सहित भोजन करते थे। जो देखकर मातायें खुश होती थीं। भरत शत्रुहन दोनों भाई हनुमान सहित फुलवाड़ी में प्रेम से जाते थे।

सब गृह गृह होइ पुराना । राम चरित सुन्दर विधि नाना ।
नर अरु नारि राम गुण गावहि । करहि दिवस निशि जात न जानहि ।

घर घर में राम जी के चरित्र पुराण होते थे । स्त्री पुरुष राम जी के गुणों की गाथा गाया करते । इसी सुख में बिभोर रहते थे, दिन और रात व्यतीत होते कुछ जाना ही नहीं जाता था ।

अनुज सखा युत भोजन करहीं । मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं ।
जेहि विधि सुखी होइ सब लोगा । करहि कृपानिधि सोइ संयोगा ।
प्रात काल उठि कै रघुनाथा । मात पिता, गुरू नावहि माथा ।

भगवान ने सब के साथ नियमानुकूल सदव्यवहार जिसके प्रति जैसा उचित था वैसा ही किया था । अब अधिकांश गृहस्थ स्वार्थपूर्ण बिषय बिकारों में फंसे हुए उचित व्यवहारों का पालन नहीं कर पाते जिसके कारण सदा दुःखी रहते हैं । और गृहस्थी जंजाल सी प्रतीत होती है । यह गृहस्थ जीवन तो सुखसाधन का स्थान है सुख सिरोमणि ताज है । सबके साथ सद-व्यवहार और पूजा, यज्ञ, भजन, दान करके अपना जीवन लक्ष तक पहुँच सकता है । यदि मनुष्य इस आश्रम में रहकर अपना धर्म निबाहे तो वह अवश्य ही सुखी रहेगा जैसे अपने परिवार वालों से तथा अपने माता पिता, पुत्र पति पत्नी आदि से धर्मानुकूल उचित व्यवहार करे तो गृहस्थी भी निस्संदेह स्वर्गमयी बन सकती है और राम राज्य का सा सुख अब भी प्राप्त हो जावे ।

ऊंचे शिखर पर एकबारगी कोई नहीं पहुँच सकता धीरे धीरे बराबर चढ़ता जाय तो सभी पहुँच सकते हैं । इसी भांति अपने चित्त में एक दूसरे के प्रति अच्छी धारणा रख कर सदा प्रेम के साथ सद-व्यवहार ही करने का प्रयत्न करता रहे, तो जिसंका मन मलीन होगा उसका भी पुनः कुछ दिनों के बाद आपस का व्यवहार शुचि निर्मल हो जायगा, तब यह प्रेममय जीवन होके कहीं भी दुःख का अनुभव नहीं होगा । दुख में भी सुख ही प्रतीत होगा क्योंकि दुःख में जब एक दूसरे का हाथ बटायेंगे तब अपना दुःख भी कम प्रतीत होगा ।

गृहस्थ में प्रवेश करते ही मनुष्य के एक से दो हो जाते हैं । यह पति, पत्नी गृहस्थरूपी गाड़ी के दो पहिये हैं । यदि दोनों पहिया बराबर नहीं हैं तो गाड़ी का चलना असम्भव है । यदि एक दूसरे के मन के विपरीत चलेंगे तो सुख मिलना दुर्लभ है । पति पत्नी का रक्षक हो, पत्नी पति की आज्ञाकारणी हो, दोनों एक दूसरे के हित में अपना हित समझें । दोनों एक दूसरे के दुःख सुख के संगी हों । एक की प्रसन्नता दूसरे की प्रसन्नता हो । एक का दुःख दूसरे का दुःख हो । एक का सुख दूसरे का सुख हो । यदि एक रोगी है तो दूसरा स्वस्थ्य और खुश नहीं हो सकता । पति को पत्नी पर अपना शासन अवश्य रखना चाहिए । किन्तु कड़ी परतंत्रता की बेड़ी में न जकड़ देवे कि पत्नी कुछ भी संसार में न कर सके केवल दाने चुनकर पिजड़े में पड़ी रहकर ही जीवन व्यतीत करे । पति पत्नी दोनों कलह के लिए नहीं हैं बल्कि प्रेम के लिए हैं । यह चाहिए कि पति पत्नी दोनों सुमति के साथ रहकर अपने जीवन तथा घर को सुखद और शान्तिमय बनाये रखने के ही सदा उपाय करें । ताकि यही प्रभाव घर के बच्चों पर पड़े । नन्हें बच्चों को भी धर्म के सांचे में ढालिये । क्योंकि हमारा व आपका उज्ज्वल भविष्य इन्हीं बच्चों पर निर्भर है । पति पत्नी एक दूसरे की केवल कामपिपासा शान्त करने के लिए नहीं हैं । बल्कि एक दूसरे के चिरसंगी हैं जैसे परछाँही अपना साथ कभी नहीं छोड़ती । यही भाव दोनों के हृदय में रहना चाहिए ।

प्रभु करूणा मय परम विवेकी । तन तज रहत छांह जिमि छेंकी ।
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई । कहँ चन्द्रिका चन्द्र तजि जाई ।

मनुष्य जब चलता है तब परछाहीं सदा साथ ही रहती है चन्द्रमा के निकलने पर चाँदनी बनी रहती है । इतना सम्पर्क घनिष्ट है कि बियोग हो ही नहीं सकता । इसी भाँति स्त्री पुरुष का सम्पर्क दृढ़ता से होना चाहिए । इनके वियोग में तो संसार में अंधकार छा जाता है । उसी भाँति पति पत्नी में आपस में बिलग होकर अपने जीवन में अंधकार न लावें । पत्नी ही आप की सहचरी और सुख दुःख की सहायिका है गृहस्थी में ज्योर्तिमयी प्रकाश लाने वाली है । अपने जीवन

की आनन्ददायनी पत्नी ही होती है । पत्नी ने आप के लिये कितना बड़ा त्याग किया, अपने माता पिता भ्राता आदि परिवार को त्यागा केवल आप के लिये । आप ने भी उसका हाथ पकड़ कर उसके जीवन संगी बने । प्रेम सूत्र के फेरे से बाँधे गये । उस प्रेम सूत्र को खोलने का कभी भी प्रयत्न अपने जीवन में न करिये । ज्यों ज्यों उस प्रेम सूत्र की गांठ कसी रहेगी उतना ही आप दोनों का जीवन सुखमय रहेगा

एकै धर्म एक ब्रत नेमा । काय वचन मन पति पद प्रेमा

स्त्रियों के लिये यही एक धर्म है कि सच्चे मन से पति की सेवा करें । इसी पतिब्रत के प्रभाव से सावित्री ने पति का जीवनदान पाया, अनसुइया जी ने ब्रह्मा, बिष्णु, महेश को बालरूप बना के भूले में भुलाया । जलंधर राक्षस की स्त्री बृन्दा के पतिब्रत धर्म के प्रभाव से सदा उसकी बिजय होती गई । अन्त में जब बृन्दा का सतीत्व छल से भ्रष्ट किया गया तभी वह राक्षस मारा जा सका । अनेकों पतिव्रता सती स्त्रियों के इतिहास से हमारे भारत में अनेकों पुस्तकें भरी पड़ी हैं । उनके जीवन के चित्रण से अपने को मिलाइए कि मेरा पति के प्रति क्या धर्म है । केवल अपना फैशन बना कर पति के साथ घूमने में ही स्त्री चिर संगिनी नहीं हो सकतीं । पहिले की स्त्रियाँ पति के प्रति कितनी सहानूभूत रखती थीं कितना आदर करती थीं । महारानी सीता जी सदा पति के अनकूल चलती रहीं अनेकों दास दासी के होते हुए भी स्वयं अपने हाथ ही से अपने पति का कार्य और उनकी सेवा करना अपना धर्म समझती थीं । प्रचीन काल के नारियां केवल पतिब्रत धर्म के प्रभाव से महान शक्तिशाली होती थीं । अब बर्तमान युग जैसे हर प्रकार से धर्मच्युत होता जा रहा है । उसी तरह स्त्रियों में यह शक्ति भी लोप होती जारही है ।

अधिकांश नारियाँ जो अशिक्षित हैं वे अपने घर की चहार दिवाली के मध्य गृहस्थी के बोझ से लदी जैसे तैसे रह लेना ही जानती हैं । वह नहीं समझपाई कि पति के सामने कैसे रहूँ, घर कैसे रक्खू ँ, क्या ब्यवहार करू ँ । जो अल्प संख्यक महिलावर्ग में सभ्यता आई है तो वह विलायती प्रभाव के कारण

जिसका परिणाम कुशलदायक ही हो उठता है। इस तरह भारत की नारियों में दो विरोधी दल बन गए हैं। एक ओर जहां पुराने तर्ज-तरीके के आचार विचार हैं वहां जीने की कला सोई पड़ी है। दूसरी ओर नई-नई रीतियों की प्रणाली में रहने की क्रिया जागी है तो जीवन का धर्म सौन्दर्य ही अब सोता जा रहा है। अतएव आज का नारीसमाज धर्म के शिखर पर न जा कर धर्महीन हो रहा है साथ ही शक्ति भी क्षीण होती जा रही है। पहले की नारीयों का वह आदर्श चरित्र अवलोकन करने से आज मन गर्व से प्रफुल्लित हो उठता है कि उन्होंने अपने तप बल से मुर्दे को जिला लिया संसार में सूर्य का निकलना ही बन्द कर दिया। जिससे संसार में हा हा कार मच गया, अब बर्तमान युग में भूतकाल की तुलना की जावे तो उसके बिलकुल विपरीत युग आ गया। अब न पति स्त्री के प्रति अपना धर्म निभाता है, और न पत्नी पति के साथ अपना कर्त्तव्य निभा रही है। इसी पाप का प्राश्चित मिलता नजर आ रहा है कि तमाम नारी विधवा होकर दुखी हैं। हे जगत की नारियों चेतो और शीघ्र अपने धर्म पर चलो। अपने पति की मंगल चाहने वाली नारियों पति की चिरसंगिनी बनो सदा उनको खुश और स्वस्थ्य रखने का उद्योग करो जिससे वे चिरआयु हों और अपना सुहाग अमर होवे।

स्त्री के जीवन का अधिक अंश पति के साथ बीतता है। पति ही स्त्री का सर्वस्व बन जाता है। संसार के सर्व नाते पति से नीचे ही हो जाते हैं। भारतीय संस्कारों के अनुसार पति की खुशियों में ही पत्नी का सुख है। अतएव पति के सन्मुख स्त्री का रहन सहन उसकी इच्छा के अनुकूल होना चाहिए। यदि उन्हें सादगी पसन्द है तो आप को तड़क भड़क में नहीं रहना चाहिए। यदि वे आधुनिक सौन्दर्य मेकप द्वारा सुन्दर ढंग के कपड़ों में सुसज्जित रखना चाहते हैं तो उसी ढंग से रहिए। अपने बिचारों को बदल कर दोनों को परस्पर एक बिन्दु पर स्थिर हो जाना चाहिए कि दोनों के बिचारों की समान रक्षा हो सके।

भाई-भाई गृहस्ती-रूपी वृक्ष की डाल हैं और उनके बच्चे शाखें हैं। उस पेड़ को प्रेम रूपी जल से सब सीचेगें तब वह पेड़ सदा हरा भरा रह कर सुरक्षित रहेगा। आनन्द से गृहस्थी चलेगी। मां बाप भी देख कर प्रफुल्लित होंगे। यदि पेड़ में दो शाखा हैं एक टूट जायगी तो उस पेड़ की क्या सुन्दरता रह जायगी उसके नीचे तो कोई छाया के लिये भी खड़ा होना न पसन्द करेगा।

यदि भाई-भाई में प्रेम नहीं है तब गृहस्थी में कोई दुखःसुख का देखने वाला ही नहीं है। यह भी कितना सूखा नीरसपन है। तुलसीदास जी ने संसार के हित ऐसा धार्मिक महत्वशाली ग्रन्थ रचा है जो इन पदों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि भाई भाई में कितना सच्चा प्रेम होना चाहिए और उनका एक दूसरे के प्रति क्या कर्त्तव्य है।

जानि तुमहिं मृदु कहों कठोरा। कुसमय तात न अनुचित मोरा।
होंहि कुठाऊ सुबन्धु सुहाये। आड़हि हाथ अशनि के घाये।

हे भाई भरत तुमको जानते हुये भी कड़े वचन कहता हूँ। किन्तु यह कुसमय की बात है। पर अच्छे भाई ही तो समय पर सहायक होते हैं। बज्र की चोट हाथ ही रोकता है भाई भाई एक दूसरे की बांह हैं। दोनों हाथ ही तो शरीर की रक्षा करते हैं।

मोर तुम्हार परम पुरुषारथ। स्वारथ सुयश धर्म परमारथ।
पितु आयुस पालिय दोउ भाई। लोक बेद भल भूप भलाई।
गुरु, पितु, मातु स्वामि सिख पाले। सुगम पग परत न खाले।
अस बिचारि सब सोच विहाई। पालहु अवध अवधि भरि जाई।

मेरा और तुम्हारा पुरुषार्थ उत्तम यश इसी में है कि दोनों माता पिता की आज्ञा मानें। गुरू, माता, पिता की आज्ञा मानने से पैर नीचे नहीं पड़ता। ऐसा विचार करके शोच छोड़ो जाकर चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज-काज सँभाल कर सबका पालन करो। भरत जीं आज्ञा मान गये किन्तु कुछ आधार के लिए संतोष नहीं हुआ। तब प्रभु जी ने दया करके अपनी चरण पादुका दे दीं।

उसी को सेवा धर्म से निर्मल नेत्र के समान लेकर सहर्ष हृदय से यिलागला और अबलम्ब पाने का सहारा ले कर प्रसन्न हुए।

नित पूजत प्रभु पांवरी। प्रीति न हृदय समाति।
मांमि मांगि आयुस करत। राज काज बहु भांति।

चरण पादुका को नित प्रीति से पूजा करते हैं। और उसी से आज्ञा मांग मांग कर राज कार्य संभालते हैं। जैसे उनका अपना कुछ है ही नहीं, इतना त्याग था।

अब भी तो वही पवित्र भूमि है वही धार्मिक ग्रन्थ प्रत्येक घर में है। और प्रति दिन बड़े बूढ़े नित पाठ भी करते हैं और थोड़ा बहुत लड़के भी रामायण की चौपाई पढ़ ही लेते हैं। तो केवल पाठ कर लेने से क्या लाभ बूढ़े तो पाठ करते हैं परलोक बनाने के लिए। अरे पहिले लोक बनाइए। जिसमें भगवान ने जन्म देकर भेजा है। लोक बनाने के बाद परलोक तो बन ही जायगा पाठ करके मनन करिए। उससे शिक्षा लीजिए और अपने बच्चों को कर्त्तव्य-परायण बनाइए। उसी की शिक्षा उनके दिल में भर दीजिये। यही पवित्र भूमि पर आपस में कितना प्रेम था। अब क्यों इतना परिवर्तन होता जा रहा है कि भाई भाई में प्रेम के जगह द्रोह उत्पन्न होता है थोड़ी वस्तु जायदाद के पीछे लड़ते कटते हैं। एक दूसरे के सुख दुख से मानो विरक्त रहना ही धर्म समझते हैं। अब अपने मन की मलीनता को त्याग कर आपस में परस्पर प्रेम से मिल जुल कर सदा रहिए। पुनः राम राज ऐसा आनन्द घर घर में रहेगा। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। संगठन बहुत बड़ी वस्तु है।

यथा धर्म शीलान के। दिन सुख संयुत जाहि।

बहुत गहरे जल में जैसे सब मछलियाँ सुखी रहती हैं। वैसे ही धर्मवान पुरुष तथा परस्पर सबसे प्रीति रखने वाले के दिन सुख से बीतते हैं।

अपने घर आये हुये अतिथि का सतकार करना भी अपना मुख्य कर्त्तव्य है। उनकी खाने पीने की सारी आवश्यकतायें यथा समय पर पूरी करनी चाहिये जिससे उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो।

माता पिता की सेवा करना तथा आज्ञा मानना तो अपना महान कर्त्तव्य है ही उसके लिए अधिक क्या कहना मर्यादा। पुरुषोत्तम श्री राम जी ने माता पिता की आज्ञा का कितना बड़ा महत्व दिया है कि अपना राज महल राजतिलक छोड़ कर १४ वर्ष बन में बिताया ।

## गुरू के प्रति

गुरू का जीवन में क्या महत्व है यह निःसन्देह एक बहुत सरस, सरल एंव गूढ़ प्रश्न है। हमारी परम्परा हमें उत्तरोतर बताती आई है कि हमारी जीवन नौका के पतवार गुरु ही हैं । जैसे सूर्य नारायण की किरणों से अन्धकार दूर होता है उसी भांति गुरु ही द्वारा ज्ञान प्राप्त कर हृदय में प्रकाश होता है। मनुष्य जब जन्म लेता है तो वह अबोध रहता है, माता, पिता पालपोस कर मनुष्य की वाणी देते हैं। परन्तु वाणी और आकार पाने से ही अनुपम मनुष्य नहीं बन जात है। उसे तो मनुष्य बनने के लिए मनुष्यता पाना आवश्यक है। जिसका मूल्य आधार ज्ञान होता है और ज्ञान ही गुरु की एक प्रथम अनुपम भेंट होती है। यदि यही ज्ञान मानव में न पाया जाय तो उसमें और पशु में कोई अन्तर नहीं है। जैसे संसार में अनेक प्रकार के पशु पाये जाते हैं उसी प्रकार से मनुष्य की गिनती भी एक अनोंखे ढंग की पशु में होती है। खेत में किसान का बोया हुआ अन्न तैयार होता है। और उसी पृथवी में भगवान हो का दिया जंगली पेड़ उग आया। दोनों को भगवान ने ही पैदा किया पर भेद केवल इतना ही है कि वह चतुर किसान का बोया अन्न सभी के काम आता है और जंगली पेड़ काट कर फ़ेंक दिये जाते हैं । ठीक वही दशा मनुष्य की भी है। गुरू की सीख पाकर मनुष्य दिव्य ज्ञान पाकर संसार में सब कुछ कर सकता है। और बिना गुरु के सीखवाला मनुष्य मूर्ख अज्ञानी रह कर जंगली मनुष्यों की भांति संसार में बिचरण करता है । तब उसकी क्या इज्जत और कितना सुख पा सकता है । यह तो सभी को प्रतीत है। विद्यावान होकर ही मनुष्य संसार में सभी जीवों से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है । अन्य जीवों पर भी अपना शासन बनाये रहता

है। अपनी शक्ति को इतना प्रबल बना लेता है कि कुछ भी करे संकोच संशय की कल्पना भी नहीं करनी पड़ती इसका मूल्य आधार ज्ञान है और ज्ञान का मूल आधार गुरु ही है। गुरु का इतना महान महत्व है। मानव को यह सोचना परम अनिवार्य व आवश्यक तथा स्वाभाविक है कि गुरु से ऐसी सुन्दर शिक्षा प्राप्त करके ऊँची अवस्था हो जाने के बाद हमारा गुरु के प्रति क्या कर्त्तव्य है। गुरू ने आप के साथ बहुत बड़ा उपकार किया गुरु के बहुत ऋणी हैं। उस ऋण का भार सेवा और आदर द्वारा चुकाइए।

श्री गुरु पद नख मणिगण जोती। सुमिरत दिव्यदृष्टि हिय होती।
दलन मोह तम सो सुप्रकासू। बड़े भाग्य उर आवहिं जासू।
उघरहिं बिमल विलोचन ही, के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के।
सूझहिं राम चरित मणि माणिक। गुप्त प्रकट जँह जो जोहि खानिक।

रत्नों के ढ़ेर के से प्रकाश वाले गुरू जी के चरणों के नाखून का स्मरण-मात्र से हृदय में दिव्य दृष्टि का प्रकाश होता है जिसके हृदय में ध्यान मार्ग द्वारा अज्ञान रूपी अंधकार दूर हो कर शिक्षा का सुन्दर प्रकाश प्राप्त होवे उनके बड़े भाग्य हैं। गुरु जी के ही द्वारा हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसार-रूपी रात्रि दोष और दुःख दूर हो जाते हैं। तमाम बातों का ज्ञान प्राप्त करने के उपरान्त ही मनुष्य इस लोक में मणि माणिक से घर भर देता है। तथा ईश्वर का प्रेमी हो के भगवान के चरित्रों का भी ज्ञान होता है।

जे शठ गुरु सन ईर्षा करहिं। रौरव नरक कल्प शत परहिं।
कर्णधार गुरु दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।

अपने जीवन को इस ऊँचे लक्ष तक पहुँचाने वाले केवल गुरु जी और टीचर ही हैं। जो मूर्ख इनसे बैर करते हैं वह सैकड़ों कल्पों तक रौरव नरक में पड़ते हैं। मनुष्य यदि गुरु जी की शिक्षा को अपनी जीवन नैया का कर्णधार बना लेवे तो दुर्लभ कार्य भी सुलभ हो जाय तथा अपना जीवन दिव्य हो जावे।

गुरु जी के प्रति शिष्यों के हृदय में मान इज्जत करने के लिए कितनी जगह होनी चाहिए। इस गूढ़ प्रश्न का समय समय पर अनेकों लेखकों तथा कवियों

ने अपने अपने विचार प्रकट किये हैं । और मानस रामायण में तो इसका विवेचन पर्याप्त रूप से मिलता ही है । तब ऐसे महान महत्व का मैं अपने टूटें फूटे शब्दों में क्या वर्णन करूँ वह तो सूर्य के सामने दीपक जलाने के समान होगा ।

देखिइए श्री राम जी अपने गुरु की कितनी सेवा तथा मान करते थे वह इन पदों से स्पष्ट है । हर व्यक्ति को इसी आधार पर चलना चाहिए जिससे अपना कल्याण हो ।

गुरु आगमन सुनत रघुनाथा । द्वार आइ पद नायउ माथा ।<br>
सादर अर्घ्यं देइ घर आने । षोडश भाँति पूजि सनमाने ।<br>
गहे चरण सिय सहित बहोरी । बोले राम सकल क.र जोरी ।<br>
सेवक सदन स्वामि आगमनू । मंगल मूल अमंगल दमनू ।<br>
तदपि उचित जन बोलि सप्रीती । पठइय काज नाथ असनीती ।<br>
प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू । भयऊ पुनीत आज यह गेहूँ ।<br>
आयुस होय सो करिय गोसाईं । सेवक लहै स्वामि सेवकाई ।

श्री राम चन्द्र जी ने गुरू बशिष्ट का आना सुनते ही द्वार पर आकर उनके चरणों में शीश नबाया । फिर अर्घ्यं देकर आदर सहित घर को ले गये और सोलहों प्रकार से पूजन कर के बड़ा सम्मान किया । फिर सीता जी समेत उनके चरण छुए और हाथ जोड़ कर बोले कि सेवक के घर स्वामी का आना सब मंगलों का मूल और अमंगलों का नाशक होता है उचित यही है कि स्वामी सेवक को बुला कर आज्ञा देवे । सो आपने अपनी प्रभुता छोड़ कर मेरा स्नेह किया जो स्वयं चले आये । जिस से आज यह घर पवित्र हुआ । अब जो आज्ञा हो सो किया जाय । क्यों कि सेवक स्वामी की ही आज्ञा पर चलने तथा उसकी सेवा करने से ही शोभा पाता है ।

सुनि सनेह साने बचन । मुनि रघुबरहिं प्रशंश ।<br>
कस न राम तुम कहहु अस । हंस बंश अवतशं ।

ऐसे स्नेह भरे बचन सुन कर बशिष्ठ मुनि ने श्री रामचन्द्र की बहुत बड़ाई की और कहा हे राम ऐसा क्यों न कहो सूर्य्य बंश तो सदा से गुरु भक्त चला आया है फिर तुम तो इस वंश के शिरमौर हो। इन पदों से पता चलता है कि गुरू हमारे लिए कितने महान तथा आदरणीय हैं। इस पर बिचार किया जाय और सोचा जाय तो ज्ञात होगा कि भगवान गुरू जी की कितनी प्रतिष्ठा करते थे और अब हम अपने गुरूवों के प्रति क्या कर रहे हैं? और क्या करना चाहिए? गुरू हमारे लिए कितना करते हैं? हम गुरू के प्रति आदर तथा सदभाव न रख कर गुरू के कितने ऋणी हो रहे हैं भगबान गुरू जी की कितनी आज्ञा मानते थे और कितनी अधिक सेवा करते थे।

समय सप्रेम विनीत अति। सकुच सहित दोउ भाइ।
गुरू पद पकंज नाइ शिर। बैठे आयुस पाइ।

डर, स्नेह, और संकोच सहित नम्र भाव से दोनों भाइयों ने गुरू जी के चरणों में शीश नबाया और आज्ञा पाकर बैठे।

निशि प्रवेश मुनि आयुस दीन्हा। सबहीं सन्ध्या बन्दन कीन्हा।
कहत कथा इतिहास पुरानी। रुचिर रजिन युग याम सिरानी।

रात्रि आते मुनि ने आज्ञा दिया राम जी और लक्षमण जी ने सन्ध्या-बन्दन किया फिर मुनि ने कथा इतिहास कहा जब अधिक रात्रि हो गई तब

मुनिवर शयन कीन्ह तब जाई। लगे चरण चापन दोउ भाई।
जिनके चरण सरोरूह लागी। करत बिबिध जपयोग बिरागी।
ते दोउ बन्धु प्रेम जनु जीते। गुरू पद कमल पलोटत प्रीते।
बार बार मुनि आज्ञा दीन्हा। रघुबर जाय शयन तब कीन्हा।
चापत चरण लषण उरलाये। सभय सप्रेम परम सुख पाये।
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता। पौढ़े धरि उर पद जलजाता।
उठे लषण निशि बिगत सुनि। अरूण शिखा धुनि कान।
गुरू ते पहिले जगतपति। जागे राम सुजान।

विश्वामित्र ने जाकर शयन किया तब दोनों भाई पैर दबाने लगे। जिनके चरणारबिन्दों के लिए बैराग्यवान पुरुष अनेक प्रकार से पूजा तप करके ध्यान करते हैं। वही राम जी मानों स्नेह और नीत को पालन करते हुए प्रीति से पैर दबाते हैं। फिर मुनि ने जब बार बार कहा तब जाके भगवान ने शयन किया और फिर लक्षमण जी अपने हृदय में लगा कर राम जी का पैर दबाया और प्रातः काल होते ही गुरू जी के जागने से पहिले ही संसार के स्वामी जागे।

पहिले कितनी नीति और आज्ञाकारिता थी पहिले की अपेक्षा अब कुछ नीति, अदब, लिहाज रह ही नहीं गया किन्तु अपने पूर्वजों की सभ्यता भूलइए नहीं। उसी को अपनाइए उसी में अपना कल्याण होगा।

जे गुरू चरण रेणु शिर धरहीं। ते नर विभव वश करहीं।

जो गुरू चरणों की धूर सिर पर चढ़ाते हुए आदर सहित आज्ञा पालन करते हैं। वे संसार में सकल ऐश्वर को प्राप्त कर सकते हैं। सदा सुखी रहेंगे, वे आदरणीय सभ्य जब कहलावेंगे तथा उत्तम श्रेष्ठ जनों में गणना होगी। और जो मान इज्जत नहीं करेगा, उसे हजारों वर्ष तक घोर नरक यातना भोगनी पड़ेगी और कभी सुखी नहीं रहेगा। गुरू की इज्जत मन क्रम बचन से करना परम धर्म है। तन से सेवा, मन से आदरभाव, प्रिय वचन से बोलना, उनकी आज्ञा मानना। यही अपना लक्ष बना कर शिष्यों को सेवा करनी चाहिए।

# वास्तविक धर्म

तुलसी दास जी ने लिखा है कि—

बड़े भाग्य मनुष्य तन पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन गावा।

मनुष्य तन बड़े पुण्य के प्रभाव से मिला है। इसे सब ग्रन्थ और संत आदि सभी कहतेहैं। स्वयं समझना भी चाहिए कि न जाने कितने योनियों में भ्रमण करने के बाद यह मनुष्य तन मिला। अब जो कुछ भी चाहें इसी तन के द्वारा कर सकते हैं। यह मनुष्य तन नर्क तथा स्वर्ग पहुंचने की सीढ़ी है। मानव तन द्वारा ही ज्ञान बुद्धि बढ़ा कर महान कीर्ति प्राप्त कर सकते हैं। अज्ञानता को दूर कर के बुरे कर्म छोड़ कर चरित्र उज्ज्वल कर सकते हैं। जिसने यह सुन्दर तन पा कर अपना परलोक नहीं बनाया वह अभागा है।

यह तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गहु स्वल्य अन्त दुखदाई।
नर तन पाय विषय मन देहीं। पलटि सुधा ते शठ विष लेंही।

मानव तन पाने का फल इन्द्रियों को सुख देने को नहीं है कि सांसारिक सुख प्राप्त कर के स्वर्ग का ऐसा आनन्द उठावें। और वही विषय सब अन्त में दुखदाई हो जावे। जो नर तन पा कर केवल विषय ही में मन लगाते हैं, वे मूर्ख अमृत के बदले बिष लेते हैं। और फिर बिष पाकर रोते हैं, किन्तु रोन भी निरर्थक है क्यों कि बुरे कर्मों का फल तो दुखदाई अवश्य होगा।

सो परत्र दुख पावई। सिर धुनि धुनि पछितायु।
कालहिं कर्महिं ईश्वरहिं। मिथ्या दोष लगाय।

मनुष्य अपने कुकर्म करने से दुख पाता है तब समय के विपरीत होने से ईस्वर को झूठा दोष देकर कहता है भगवान बड़ा दुःख दे रहे हैं। और अपने किये हुये

कुकर्मों पर पश्चाताप का वेग भी उमड़ता है। अपने किये हुये कर्मों पर दुःख हो वह तो ठीक किन्तु भगवान को दोष देना तो और भी भूल है।

भगवान तो बड़े दयावान हैं। जो इस सुन्दर मनुष्य तन को दिया और हाथ पैर नाक, कान आंख दिमाग आदि सभी सुरक्षित बनाया। अब आप उन्हें भली भांति उपयोग करिएगा तो सुख तथा धर्म के भागी होंगे। और आदि उन्हे अनुचित रूप से उपयोग करेंगे तो दुँःख पावेंगे तथा नर्क के भागी होंगे ही उसमें प्रभु का क्या दोष जो बिया बोया जायगा वही काटने पर मिलेगा। मटर बो कर गेहूँ को आशा लगाना बेकार है। प्रभु ने हाथ दिया उसे दूसरों की सेवा और दान देने तथा भगवन की पूजा आँदि करके जीवन सार्थक हो सकता है। तथा उसी हाथों द्वारा अनेकों व्यभिचार, चोरी, डकैती करके जीवन निरर्थक भी हो सकता है। भगवान ने पैंर दिया उसके द्वारा चल कर तीर्थ जाइये, देश सेवा करिये दीनगरीबों की रक्षा कर यश प्राप्त करिए। चाहे उन्हीं पैरों द्वारा चलकर कुकर्म के रास्ते पर जाइए। नाक द्वारा चाहे सुगंध सूँघिए। चाहे दुर्गन्ध की बास लीजिए। कान द्वारा चाहे भगवान का गुण गान अथवा दीनदुखियों की पुकार सुनकर आशिर्वाद लीजिए चाहे पराई निन्दा सुनकर लड़ई झगड़ा करिए। आँख से चाहे भगवान के दर्शन करिए, चाहे पराई स्त्री पर कुदृष्टि डालिए। जिव्हा से चाहे मधुर भाषण करिए चाहे कटु जहरीले शब्द बोलिए। दिमाग को चाहे तीव्र बनाइए, चाहे उसे मन्द बना डालिए। प्रभु ने दया कर के सब कुछ दिया अब बनाना और बिगाड़ना सब अपने हाथों में है। चाहे प्रत्येक अंगों द्वारा धर्म और सुकीर्त कर के नाम यश प्राप्त करिये अथवा पाप करके दुःख भोगिए। जब बच्चा पैदा होता है तब उसका हृदय कितना शुचि निर्मल रहता है। उसके हृदय में किसी तरह के पाप बिकारों का अश लेशमात्र रहता ही नहीं। शनैः शनैः ज्यों ज्यों वह बढ़ता है उसको भांति भांति के गुण तथा अवगुणों का ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति देते हैं। वह शक्ति अच्छे विचारों द्वारा बढ़ती है। जब बालपन से ही अच्छे बिचार होंगे तब वह ज्ञानवान होगा और किसी अंगों द्वारा पाप नहीं करेगा उसे उचित अनुचित कर्म करने की स्वयं प्रेरणा होगी जो पाप करने से बचाएगा। तब शरीर के सब अंग शुचि निर्मल रहेंगे।

सब से प्रथम अपनी विचार शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। अपनी विचार शक्ति तीव्र कर के लोगों ने कितनी आश्चर्यजनक वस्तुओं का निर्माण कर डाला और जिनको वह ज्ञान नहीं है वे सोचते हैं यह चीजे कैसे बनी हैं। विचारशक्ति ही द्वारा ज्ञान प्राप्त कर के लोग महा विद्वान हो जाते हैं। जिन्हें गीता रामायण अनेकों ग्रन्थ कंठस्थ रहते हैं वे दूसरों को भी वह शक्ति प्रदान करते हैं। और वही विचारशक्ति जिसकी मन्द हो जाती है, वह ज्ञान शून्य हो जाता है तब वह अज्ञानता बश मनमाने प्रत्येक अंगों द्वारा जो मन चाहता है पाप करता है और संसार में अपयश ले के दुःख भोगता है। सुख तथा दुःख मनुष्य को मिलता है सब अपने ही कर्मों द्वारा मनुष्य जो कुछ दूसरों को देता है स्वयं ही वह प्राप्त करता है। दूसरों को सुख देगा उसके फलस्वरूप सुख मिलेगा। दूसरों को दुःख देगा उसके परिणाम में दुःख पावेगा। सुख और दुःख पाने की विशेषता यही है।

नर तन भव बारिध कह बेरे। सम्मुख मरुत अनुग्रह मेरे।

संसार समुन्द्र पार जाने के लिए मनुष्य तन नौकारूप है। उसको धर्म से रख कर नीति सहित चलावेंगे तो सरलता से पार हो जायगी। यदि नावरूपी तन चलाने में कोई असावधानी हुई तो नाव डूब जावे तो क्या आश्चर्य। प्राणी-मात्र में अच्छे ही कर्म सुकीर्त, सुरुचि, सुनीति युक्ति की ही भावनाओं का संचालना होना चाहिए कि वे नर तन पाकर अपने जींवन को सफल बनावें।

जिन्दगी एक मरुस्थल की तरह नीरस न बनावें कि जीने में कुछ आनन्द उत्साह ही न रहे। पाप करने के कारण दुख पाकर जिन्दगी बेकार सी प्रतीत होने लगे।

हम सबों को यह ध्यान रखना चाहिए कि अपनी जिन्दगी को बीरान बनाने वाले स्वयं हमी हैं। तब जिन्दगी से ऊब कर मौत की याद करते हैं। पर उस मरुस्थल जिन्दगी में हरियाली लाने का प्रयत्न नहीं करते। यदि हमारे हृदय में यह विश्वास जाग उठे कि हम स्वयं ही अपनी जिन्दगी के सुख दुःख देने वाले हैं। इस भय से जब यह सोच कर अच्छे कर्म करने लगें तब वही

मरुस्थल हृदय पर हरियाली छा जावेगी। आनन्द का स्त्रोत बहने लगे नीरसता दूर हो जावे। किन्तु अति ही सोचनीय विषय है कि लोग अपना वास्तविक धर्म छोड़ते जा रहे हैं।

कलिमल ग्रसेउ धर्म सब। लुप्त भये सद ग्रन्थ।
भये लोग सब मोह बश। लोभ ग्रसे शुभ कर्म।

कलियुग के प्रभाव से सब ग्रन्थों का महत्व तो हट गया अब लोग अच्छे ग्रन्थों का आदर नहीं करते तभी अज्ञानी और धर्महीन होते जा रहे हैं। अज्ञानता के कारण कर्म भी उचित रूप से करना दुर्लभ है। न किसी में सच्चा प्रेम है। न वास्तविक धर्म है बल्कि धर्म के नाम पर लोग हँसते हैं। कलियुग का प्रभाव बड़ा ही विचित्र है।

जो बहु झूठ मसखरी जाना। कलियुग सोई गुण-वन्त बखाना।
झूठै लेना झूठै देना। झूठै भोजन झूठ चबेना।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाहिं महा अहि हृदय कठोरा।

इन पदों का जो सारांश है वह कलियुग के प्रभाव से मनुष्य उसी प्रकार के होते भी जा रहे हैं। किन्तु क्या ऐसे मनुष्यों की गड़ना कोई प्रशंसनीय जनों में हो सकती है या सभ्य कहला सकते हैं।

सुनहु असन्तन केर स्वभाऊ। भूलेहु संगति करिए न काऊ।
तिन कर संग सदा दुःख दाई। जिमि कपिलहिं घालें हरराई।

बुरे मनुष्यों का संग कभी नहीं करना चाहिए। उनका संग सदा दुखदाई ही होता है। दूसरों को हानि पहुचाने में बड़ी प्रसन्नता होती है। वे ज्ञानियों का हृदय बिगाड़ने का प्रयत्न करते हैं। अपने दुगुर्णता ही में लपटते लपटते नाश होते हैं। किन्तु अज्ञानता बस जान नहीं पाते कि हमारे ही दुगर्णों का फल प्राप्त हो रहा है। कर्त्तव्यहीन मनुष्य कभी यश नहीं प्राप्त कर सकते।

काल दण्ड गहि काहु न मारा। हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा।
निकट काल जेहि आवत सांई। तेहि भ्रम होई तुम्हारिह नाई।

काल डंडा लेकर किसी को नहीं मारता, वल्कि धर्म, बल, बुद्धि, ज्ञान जब घट जाता है, तभी मनुष्य अनेकों कष्ट सहता है। रावण का जब काल निकट आया तब उसकी बुद्धि बिलकुल भ्रष्ट हो गई। अनेकों पाप करने लगा तभी शीघ्र से शीघ्र उसका नाश हो गया। पाप के परिणाम से उसका बल, बुद्धि, धर्म सब घट गया। कर्त्तव्यहीन मनुष्य अति ही शोचनीय और निन्दनीय है। वे प्राणी इसी भांति के होते हैं जो इन चौपाईयों से सूचित होगा।

शोचिय विप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धर्म विषय लवलीना।
शोचिय नृपति जौ नीत न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्राण समाना।

वेद विहीन ब्राह्मण और जो अपना धर्म छोड़ कर विषय में लीन हो। जो राजा न्याय न जानता हो अपने प्रजा को न मानता हो वह निन्दनीय है।

शोचिय वैश्य कृपण धनवानू। जा न अतिथि शिव भक्त सुजानू।
शोचिय शूद्र बिप्र अपमानी। मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी।

धनवान होते हुए भी कजूसी करे और जो अतिथ्य के आने पर सत्कार न करे। अपने बड़ों का सम्मान न करे। जो निरर्थक बहुत बोले हंसे। अपने ज्ञान मान का अनिभान करे ऐसे प्राणी बुरे होते हैं।

शोचिय पुनि पति वंचक नारी। कुटिल कलह प्रिय इच्छाचारी।
शोचिय बटु निज ब्रत परिहरई। जो नहिं गुरू आयुस अनुसरही।

जो स्त्री कुटिल कर्कषा युक्त तथा अपने पति से छल करने वाली हो, वह महा अधर्म है। ब्रह्मचारी अपने व्रत को तोड़ दे, शिष्य अपने गुरू की आज्ञा न माने वह भी बहुत बुरा है।

शोचिय गृही जो मोह बश। करें धर्म पथ त्याग।
शोचिय यती प्रयंच रत। विगत विबेक विराग।

वह ग्रहस्थ शोचनीय है। जो अज्ञान के बस अपना धर्म त्याग कर चलें और वह जोगी जो वैराग्य छोड़ कर प्रपंच में मन लगावे उसका बैराग्य लेना ही बेकार हुआ जो तपस्या छोड़ कर भोग इच्छा करे।

शोचिय पिशुन अकारण क्रोधी। जननि जनक गुरु बन्धु विरोधी।
शोचिय लोभ निहत अति कामी। निज तन पोषक निर्दय भारी।
शोचिय सब ही विधि सोई। जो न छाड़ि छल हरिजन होई।

जो मनुष्य बिना कारण क्रोध करे। और जो माता, पिता, गुरू, भाई, बन्धु का बैरी हो वह महा नीच है। लालची, कामी, देवता, और वेद का निन्दा करने वाला, पराया धन हरण करने वाला, पर अपकार तथा दूसरों को दु:ख देने वाला तथा अपने ही तन का पोषण करने वाला और निर्दयी दूसरों से छल करने वाला प्राणी बुरा है।

मानहिं मातु पिता नहि देवा। साधुन सो करवावहिं सेवा।
जिन के अस आचरन भवानी। ते जानहु निश्चर सम प्राणी।

जिन्होंने माता पिता देवताओं का आदर नहीं किया तथा साधुओं से सेवा करवाया जिनके ऐसे आचारण होवें तो राक्षस के समान हैं। मनुष्य अपने ही कर्त्तव्यों के द्वारा मानव से देवता भी बन सकता है और दानव भी हो सकता है।

कौल काम बश कृषण विमूढ़ा। अति दरिद्र अयशी अति बूढ़ा।
सदा रोग बश सन्तत क्रोधी। राम विमुख श्रुति सन्त बिरोधी।
तनु पोषक निन्दक अघखानी। जीवत शव सम चौदह प्रानी।
प्रतिज्ञा करके न देने वाला। और सदा काम के बस रहने वाला।

कृपण, मूर्ख, निर्धन, अपयशी, वहुत ही बूढ़ा सदैव का रोगी, तथा सदा क्रोध करने वाला, भगवान से विमुख रहने वाला, बेद और संतों की निन्दा करने वाला इस तरह के प्राणी तो जीते ही मुर्दे के समान हैं। ऐसा तुलसी दास जी ने संकेत किया है। मनुष्य को विवेक से विचार कर ऐसे धर्मपरायण कार्य करने चाहिए कि वे जीते ही मुर्दे के तुल्य न बने तथा राक्षस हो के संसार में जीवन न बितावें क्योंकि आचरण हीन मनुष्य का जन्म लेना ही व्यर्थ है। जो पशुवों को भाँति खा पीकर संसार से चला गया, अपना जीवन कुछ भी न बना पाया उस का जन्म लेना बेकार हुआ।

आकर चार लाख चौरासी। योनिन भ्रमत जीव अविनाशी।

बुरे कर्म के प्रभाव से चार लाख चौरासी योनियों में भ्रमते जन्मते मरते हैं अब प्रभू ने दया करके मनुष्य देह दिया है तो जीवन को सार्थक बना लेना चाहिए।

जो न तरै भव सागरहिं। नर समाज अस पाय।
सो कृत निन्दक मन्द मति। आतमहन गति जाय।

जो मनुष्य शरीर पाकर अपने कर्म न बनावे वह अभागा मन्द बुद्धि बाला है किन्तु मूर्खता बस मनुष्य धर्म से च्युत हो जाता है तब शोच ही नहीं पाता कि मेरा वास्तविक धर्म क्या है। मैं छिप कर पाप कर रहा हूँ क्या कोई जान पावेगा। पर यह समझना भी अपने को धोखा ही देना हुआ क्योंकि हृदय में परमात्मा साक्षी हैं। अन्तर्मायी प्रभु तो घट घट के व्यापी हैं वे सब जान कर पाप पुण्य का फल तो अवश्य ही देंगे।

किन्तु अधिकतर मनुष्य तो ऐसे होंगे जो अपने हृदय में काम, क्रोध, लोभ, कपट, मोह, निर्दयता झूँठ, छल आदिक सब विकार भरे हैं और ऊपर से दिखावटी रूप में बड़ा धर्म करते हैं। माथे में त्रिपुन्डकार टीका, मानो पूर्ण साधुता बताता है गंगा नहाने में सैकड़ों डुबकियाँ लगेंगी मानो बैकुंठ की सीढ़ी पर चढ़ रहे हों। हृदय कलुषित होते हुए भी गंगा जल पीकर आत्मा शुद्ध करते हैं। छूत-छात का इतना बड़ा झंडा फहरायगा कि वह दूसरों का सभालना ही दुर्लभ हो जावेगा। राम नाम जपते माला और उंगली घिस जाती हैं। पर चित्त का ध्यान यही बिषय और प्रपंच ही की ओर जाता है। तब यह दिखावटी धर्म बिलकुल बेकार हैं।

मन मलीन तनु सुन्दर कैसे। बिष रस भरा कनक घट जैसे।

जिसका मन मलीन है तन सुन्दर है वह विष से भरा हुआ सोने का घड़ा सदृश्य है। जब मन ही मलीन है तो ऊपरी गंगा स्नान से क्या लाभ है। कोई भी गन्दा कपड़ा नित्य गंगा जी में धोया जावे पर उसका मैल नहीं कटेगा।

जब तक कि साबुन न लगाया जावे। उसी भाँति जब तक हृदय का कालापन बिषय विकार नहीं दूर होगा सब निरर्थक है। मन का विषय राग तो सतसंग ही द्वारा दूर होगा।

बिन सतसंग विवेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।
सतसंगत मुद मंगल मूला। सोई फल सिधि सब साधन फूला।
शठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई।
बिधि बस सुजन कुसंगति परहीं। फनि मनि सम निजगुन अनुसरहीं।

बिना सतसंग किये ज्ञान नहीं होता और वह बिना राम जी की दया के प्राप्त नहीं होता। बहुत बुरे मनुष्य भी अच्छी संगति से सुधर जाते हैं। जैसे पारस पत्थर के छुआने से लोहा सोना हो जाता है।

जिस भाँति शरीर के ऊपर की सफाई और उसके सजावट आदि की आवश्यकता रहती है उससे कहीं भी विशेष आवश्यकता है कि शरीर के अन्दर के सब विकारों को दूर करके ज्ञान और सदगुणों द्वारा हृदय को सुसज्जित बनाना चाहिये हृदय के सुसज्जित होने ही से सदभावना जागेगी और तभी मनुष्य को अच्छी प्रेरणा मिलेगी सत्कर्म करने को। प्रत्येक मनुष्य को जानना चाहिए कि हमारा वास्तविक धर्म क्या है क्या करना चाहिए, अपना नीति, धर्म नियम ग्रन्थों में क्या लिखा है उसी के अनुकूल सदा चलना चाहिए।

राज नीत बिन धन बिन धर्मा। हरहिं समर्पे बिन सतकर्मा।
प्रीत प्रणय बिन मद ते गुनी। नाशहि बेग नीत अस सुनी।
संग ते यतो कुमति ते राजा। मान ज्ञान पान ते लाजा।

नीत जाने बिना राज्य नहीं चल सकता। धर्म और दान किये बिना धन नहीं ठहर सकता। भगवान को अर्पण किये बिना उत्तम कर्म नहीं रह सकता। स्नेह रक्खे बिना मित्रता नहीं बनती। अहंकार करने से गुणी भी नीचे गिरता है। कुसंग से साधू भी विगड़ जाते हैं। दुष्ट मंत्री से राजा और घंमड से ज्ञान चूर हो जाता है पानी घट जाता है। मदिरा पीने से लज्जा और धन दोनों ही नाश होते हैं।

इसी नीति को सभी जन समूह को सदा याद करना चाहिए। और अपने स्वभाव को हर प्रकार से उत्तम ही बनाने का सदा प्रयत्न करना चाहिए। पवित्र आचरण से रहना, नम्र कोमल चित होना, सब पर दया करना धन के लोभ से दूर रहना। घर के प्राणी तथा देश के प्रत्ति प्रेम करना। ईर्षा डाह किसी से न करना, निरोग दृढ़ शरीर रखना। निर्मल वाणी बोलना। हठी जिद्दी न होना। पर उपकार करना। स्वार्थी न होना। सदा प्रसन्न रहना। मैं और मेरा तू और तेरा न समझना। धीरज और संतोष रखने से शान्ति मिलती है। क्षमा नम्रता रखने से गंभीरता आती है। परुष बचन त्यागने से लड़ाई झगड़ा से बचत होगी। झूँठ न बोलने से तमाम पापों से बचत होगी। आलस्य त्यागने से मनुष्य उन्नति कर सकता है। नियम पालन करने ही से धर्म पथ पर लोग चल सकते हैं। अपने से बड़ों का आदर छोटों पर प्रीति करना आदि वास्तविक धर्म हैं। यही सब बातों का ध्यान रख कर धर्म पर चलने से मनुष्य यश प्राप्त करके शान्ति पूर्वक जीवन बिता सकता है :—

जप, तप, अरु संयम नेमा। गुरु गोविन्द बिप्र पद प्रेमा।
श्रद्धा, क्षमा, मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीत अमाया।

जप, तप, व्रत संयम नियमादि से रहने पर और गुरू तथा भगवान के चरणों में प्रेम रखने से भगवान प्रसन्न होते हैं। भगवान तो इतने दयावान हैं कि थोड़े से अच्छे कर्म करने से ही प्रसन्न हो जाते हैं। अब मनुष्य को स्वयं अपने ऊपर दया चाहिए। मनुष्य जब अपने ऊपर स्वयं दया करके अच्छे कर्म करेगा तभी वह अपना अच्छा जीवन बना सकता है। प्रभू ने तो दया करके सोना, हीरा पन्ना, आदि सभी कुछ खानों में दिया है, किन्तु सोने, हीरा के टुकड़े नहीं पहिने जा सकते उसी को जब सोनार और जौहरी अनेकों कलात्मक ढंग से भूषण गढ़ते हैं तब सभी का मन उसको देखने और लेने के लिए ललायत होता है, आभूषणों की दूकाने चमकती हुई कितनी अच्छी लगती हैं। उसी भांति मनुष्य शरीर तो हम सबों को मिला यदि वह शरीर केवल ज्ञान बुद्धि-हीन मांस हड्डी का ढांचा हो जीवन की अवधि पूरा करेगा तो क्या शोभा होगी। अब

इस अमूल्य तन को ज्ञान, गुण विद्या धर्म, यश, से भर कर जगत में अपनी कीर्ति चमका दे तब यह मनुष्य-तन लेना स्वार्थ हुआ। संसार में इतना उपकार करे कि मरने के बाद भी यश रह जावे और पूण्य धर्म इतना करे कि प्रभु के निकट पहुँच सके जिससे फिर कुत्ता बन्दर होकर दुनिया में न आना पड़े। अज्ञानता को दूर करके ज्ञानवान, विद्वान, गुणवान ही बनने का सदा प्रयत्न करे ताकि सदा ऊँचे उठे नीचे न गिर सके।

बिमल ज्ञान जल से जब नहाई। तब रह राम भक्ति उरछाई।

जब मनुष्य निर्मल ज्ञान रूप जल से स्नान करता है तब हृदय के कलुषित विचार दूर होकर ईश्वर की भक्ति आती है।

बिरति बिवेक विनय विज्ञाना। बोध यथा रथ बेद पुराना।
दम्भ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ।

जो त्याग, बिवेक, नम्रता, विज्ञान तथा पुराणों का अध्ययन करते हैं तथा पाखन्ड, मान अहंकार से दूर रहते हैं भूल कर भी कुमार्ग पर पैर नहीं रखते वे नर धन्य हैं। उन्हीं का संसार में जीवन रखना सफल है।

रिपु, रज, पावक, पाप। प्रभु अहि गणियन छोट करि।

शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी सांप इन्हें कभी छोटा न समझना चाहिए यही छोटे से भयंकर रूप धारण कर लेते हैं और मनुष्य को अन्त तक पहुँचा देते हैं। इस लिए इन सबों से बचने का सदा प्रयत्न रखना चाहिए।

विषय अलम्पट शील गुणाकर। पर दुख सुख देखे पर।
सम अभूत रिपु बिमद बिरागी। लोभ मर्ष हर्ष भय त्यागी।

अच्छे स्वभाव वाले बिषयों में आसक्त नहीं होते। वे पराये दुख देख कर दुःखी और सुख देख कर खुश प्रशन्न होते हैं। सदा एक सा प्रेम सबसे करते हैं। किसी से शत्रुता नहीं। मद से रहित लोभ, क्रोध, हर्ष और भय के त्यागी होते हैं। अच्छे स्वभाव वाले और बुरे भाव वाले मनुष्य चन्दन और कुल्हाड़ी सदृश्य रहते हैं। कुल्हाड़ी चन्दन को काटती है जिस पर उसे अपना सुगन्ध

ही देती है चन्दन कुल्हाड़ी से बदला नहीं लेती वह प्रशंसनीय है। कुल्हाड़ा स्वयं ही दण्ड पाता है अग्नि में तपा कर घन से पीटा जाता है।

कोमल चित दीनन पर दाया। मन बच क्रम मम भक्त अमाया।
विगत काम मम नाम परायन। शान्त विरक्त नीति मुदितामन।
शीतल सरलता मयित्री। द्विज पद प्रेम धर्म जनयित्री।
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहि बोलहिं।
यह सब लक्षण बसहिं जासु उर। जानेहु तात सन्त सन्तत फुर।

जो कामना रहित, भगवान नाम में लीन, शान्त स्वभाव विषयों से अलग, न्याय और आनन्द के साथ जीवन बिताना। शीतल सिधाई से सब से मित्रता रखना साधु ब्राह्मण का आदर करना चित्त को शान्त निर्मल, दीनों पर दयालु होना, मन बच कर्म से ईश्वर भक्त होना। मुसीबत में भी इन्द्रियों को बस में करके नियम नहीं छोड़ते, कभी कठोर बचन किसी से नहीं बोलते जिसके हृदय में यह सब चिन्ह हों वही साधु पुरुष हैं। और वही संसार में नाम यश प्राप्त करके सदा खुश रहते हैं।

जिनके श्रवण समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।
भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे। तिनके उर तुम कहं गृह रूरे।
लोचन चातक जिनकर राखे। रहहिं दरश जलधर अभिलाषे।

जिनके कानरूपी समुन्द्र में भगवान की कथा नदियों की भांति बहे। और आंखें सदा भगवान का ही दर्शन चाहें। उसके हृदय में राम सीता लक्षमण सहित बास करते हैं।

प्रभु प्रसाद शुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहै नित वासा।
तुमहि निवेदत भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं।

पवित्र सुन्दर सुगन्धित धूप दीप की महक जिसकी नासिका आदर से ग्रहण करतीं हैं। और भोजन को नित्य भगवान का भोग लगा कर खाते हैं तथा नये कपड़े गहने भी भगवान को अर्पण करके पहिनते हैं वे धन्य हैं।

शीश नवहिं सुरगुरू द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय विशेषी।
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदय नहिं दूजा।

जो गुरू ब्राह्मणों को देख कर शीश झुकाते हैं। जिनके हाथ नित्य भगवान का पूजन करते हैं, वे धन्य हैं।

चरण राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिनके मन माहीं।
तर्पण होम करहिं बिधि नाना। बिप्र जिवाइ देई बहु दाना।
सब कर मार्गहिं एक फल। राम चरण रति होहु।

जो अनेक प्रकार के तर्पण होम आदि करते हैं। और ब्राह्मणों को भोजन करा कर दान देते हैं। अपने अच्छे किये हुए कर्मों का कुछ फल नहीं चाहते केवल ईश्वर चरण में प्रेम चाहते हैं।

काम क्रोध मद मान न मोहा। लोभ न क्षोभ न राग न द्रोहा।
सब के प्रिय सब के हितकारी। दुःख सुख सरिस प्रशसा गारी।
जे हरषहिं पर समपत्ति देखी। दुखित होहिं पर विपत्ति विषेखी।

जिनके काम, क्रोध, गर्व, मान, मोह, लालच, भय बैर आदि नहीं है। जो सब के प्यारे, सब के हितकारी, दुःख सुख में सब के साथी। प्रशंसा और गाली बराबर समझते हैं वही नर धन्य हैं।

केवल धर्म के ही ऊपर अनेकों ग्रन्थ हैं धर्म के बिषय पर अनेकों भाँति से गद्य, पद्य, श्लोकों में समझाया है संत लोग बहुत ही गहराई से धर्म का सार बतलाते हैं। पर मैंने यहाँ पर धर्म तथा कर्म करने का सार सूक्ष्म रूप में लिखा है। यदि मनुष्य केवल इन्हीं चौपाइयों के कथनानुसार ही धर्मपथ पर चलने को आरूढ़ हो जावे और नित्य प्रति का नियम इन्हीं के आधार पर बना लेवे तो शनैः शनैः धर्म पर चलते चलते उसका अनुयायी हो ही जायगा। स्वयं उसे धर्म की बातें सब अच्छी लगने लगेंगी पाप से घृणा होगी। जो नर नारी गृहस्थी में प्रवेश कर के कर्त्तव्य-परायण होते हैं सदा धर्म का पालन श्रद्धा, विश्वास, भक्ति से करते हैं। वास्तविक धर्म वही है।

---

# क्या संग्रह करें

हम अब तक यह न सोच सके कि क्या संग्रह करें। महा अज्ञान रूपी समुद्र में गोता खाते खाते तबियत घबड़ागई फेन पकड़ कर बराबर पार पाने का प्रयत्न करते रहे किन्तु पार पाना असम्भव हो गया। जब उन्हीं प्रभु के चरण कमल रूपी नौका पकड़ने का प्रयत्न किया तब किसी भाँति पार लगे। और उन्हीं प्रभु के चरण कमल के प्रभाव से ज्ञान चक्षु खुले तब अनुमान लगाया कि अब तक इसी महा अज्ञान नदी में बहते बहते जीवन समाप्त के दिन आगये अर्थात नाशवान विषयक वस्तु और क्षणिक सुख के ही लिये माया रूपी जाल में फंसे रह कर व्यर्थ जीवन बिताया। अब तक जो कुछ संग्रह किया सब क्षणिक सुख के लिये।

यह ऊँची ऊँची अट्टालिकायें आसमान से छूते हुए राजभवन ऐसे महल लहलहाते हुये फूलों से सुशोभित उद्यान। बैंको में जमा लाखों का कैश सार्टी-फिकेट, घर में सुन्दर सौभ्य वस्तुवों का आर्षक्णमयी भंडार, बक्सों में ढेरों कपड़े मानों पूरा बजाज ही आगया हो। जेवरातों की कमी नहीं जैसे कुबेर का खजाना ही हो।

नाती पोतों का बृहद सामूहिक बृन्द जिन्हें देख कर अति प्रसंन्नता होती है। कि यह बिशाल परिवार हमारा संरक्षणहार होगा। अभी इतना सब होते हुए भी तृष्णा नहीं गई। नित नई-नई अभिलाषा की जागृत होती जाती है और यही सोचना पड़ता है कि अब क्या संग्रह करूँ कि सुख शान्ति मिले किन्तु इन वस्तुवों में शान्ति कहां यह तो सभी नाशवान वस्तुयें क्षण में बिनाश हो सकती हैं चोर डांकू आग पानो काल सभी से डर है। जायदाद के पीछे कलह ईर्षा झगड़ा आदि भो बढ़ता ही जाता है। जिन कारणों से सदा अशान्ति बनी रहती है।

और इस शरीर सुख के लिये ही इतनी सामग्रियाँ एकत्रित करने की आवश्यकता हुई। इस शरीर को भी बहुत जतन से पाला। इसके रक्षा का दिन रात्रि ध्यान रक्खा। इसके सुन्दर रखने के लिए क्रीम पाउडर सेंट इत्र साबुन आदि सदा लगाया पर यह नशवान शरीर सदा रहने की कौन कहे वह बाल्यावस्था से वृद्धावस्था तक बराबर सुन्दर भी न रह सका।

समय आकर दाँत गिर गये, नैन की ज्योति भी क्षीण हो गई। धीरे-धीरे शरीर की शक्ति कम होते होते मुख की कन्ति भो कम होती गई इतनी शरीर रक्षा और सब संग्रह करते करते जीवन के अवधि के दिन निकट आगये पर अब तक यह न सोच पाये कि जो संग्रह करूँ वह सार्थक हो जिससे शान्ति मिले।

उसको अब तक इस लिये नहीं सोच पाये, कि असली ज्ञान नहीं। असत्य को सत्य समझते आये, सत्य को जानते ही नहीं और जब तक सत्य का भान नहीं होगा, तब तक तो असत्य वस्तुयें एकत्रित की जाँयगी। उन्हीं में सारा सुख अनुभव होता रहेगा। पर वास्तविक सुख इन संग्रह की हुई वस्तुओं में किंचिंतमात्र भी नहीं है। बल्कि मन की उत्तेजना बढ़ा के मन को अशान्त करने वाली वस्तुएँ हैं। इस माया रूपी लहलहाते हुए बाग को बड़े यत्न से सींचते आये। और ज्यों ज्यों झाड़ी बढ़ती गई उसमें उलझते गये। सुख के लिये मायारूपी जाल में खूब फंसे। किन्तु सुख न मिला। सुख के लिये पशुओं की भाँति ही मानव की दुर्गत होती है। आपस में एक दूसरे से लड़ते झगड़ते हैं। मानों सदा यहीं रहना है। ये नहीं यह सोच पाते कि एक क्षण में काल हम सब को ले सकता है तब व्यर्थ में यहां बाद बिवाद करना है। संसार में यश के बदले अपयश लेकर जाना होगा। माया के अधीन रह कर मनुष्य तोते बन्दर की भांति नाचता रहता और पढ़ता है। यह नहीं सोच पाता कि क्या करने से हमें लाभ है और क्या करने से हमें हानि है। इसी अज्ञान बस मानव की दुगर्त होती है, और वह पतन की ओर चला जा रहा है।चैतन्य जीव में माया की गांठ पड़ गई है। यदि वह बिल्कुल झूठी है। तथापि उसका छूटना कठिन है। और उसी से संसारी जीव दुःख भोग रहे हैं। क्यों कि

न वह गांठ छूटती है और न जीव सुखी हो पाता है। वह गांठ छूटे भी कैसे क्योंकि ज्ञान चक्षु बन्द है। जिस कारण हृदय पर अज्ञानता का परदा पड़ा है, तो अंधेरे में वह गांठ कैसे खुले। जब प्रभु की दया से ज्ञान नेत्र खुलेंगे तब वह अपना वास्तविक धर्म निबाहेगा और सोचेगा कि क्या संग्रह करने से सुख प्राप्त होगा।

संग्रह करने के योग्य यथार्थ चार असली साधन हैं। ईश्वर में प्रेम होना। और विश्वास से भजन करना। दूसरे से अपना ज्ञान बढ़ाना। तीसरे सुमति से रहना। चौथे समय को अमूल्य जानना। जिसने इन चारों बातों को अपनाया उसी का जीवन सफल हुआ वह कभी दुःखी नहीं रह सकता। जब तक संसार में रहेगा सुख शान्ति से जीवन बितायेगा और बाद में उसका नाम यश अमर रहेगा। यही संग्रह करने योग्य कर्म हैं।

अन्य पूर्वजों की जीवनी को न सोचिए। केवल महात्मा गाँधी के जीवन का चित्रण करिए तो आप के हृदयपट पर चारो साधनों के प्रति स्वयं ही अनुभव हो जायगा, कि महात्मा जी ने किसी भी असत्य वस्तु का संग्रह नहीं किया था न अपने रहने को राजमहल बनवाया, और न अपने शरीर को सूट बूट से सजा कर रक्खा। केवल लंगोटी सोंटा में ही अपना नाम अमर कर गये। और नाम अमर किया केवल इन्हीं चार साधनों द्वारा।

(१)—समय—अपने जीवन में सब से मूल्यवान वस्तु समय है सब चीजें आप पुनः प्राप्त कर सकते हैं पर समय बीत जाने पर फिर वह नहीं मिल सकता। इस कीमती समय को एक सेकन्ड भी व्यर्थ नहीं बिताना चाहिए। यदि एक मिनट समय भी बेकार खराब हुआ तो मानो बहुत बड़ी कीमती वस्तु खोगई। प्रति दिन की आय तो बही खाता पर लिखना और मिलाना आवश्यक समझा जाता है। जिस से यह मालूम होता जावे कि घाटा तो नहीं आ रहा है। पर कभी जीवन में समय खर्च का भी लेखा अपने हृदयपट पर लिखा गया कि चौबीस घंटे में कितना समय हरि स्मरण में, कितना समय गपशप में तथा कितना समय नहाने खाने सोने में बिताया। यदि इस तरह से २४ घंटे के समय

को नोट करता जाये कि कितना समय किन किन कामों में लगा तब आप पूरे जीवन के दिन का हिसाब लगा सकते हैं कितना समय सार्थक बीता और कितना समय निरर्थक बीत गया। रात को सोने में आठ घंटा। खाने में दोनों टाइम और नाश्ता करने में २ घंटा। नहाने आदि में दोनों टाइम दो घंटा। दिन में सोने के आदी है तब उसके लिए दो घंटा। क्लब आदि में एक घंटा। मनोरंजन बात चीत में एक घंटा। जीवका उपार्जन में ६ घंटा। पूजा में एक घंटा। अपने बच्चों आदि में एक घंटा। कुल २४ घंटा का नोट हो गया। कृपया अपने समय खर्च होने को डायरी पर विस्तार पूर्वक नित्य लिखिए। और रात्रि में उसे पढ़िए तो स्वयं ही प्रतीत हो जायगा कि यदि ५० साल की आयु है तब एक दिन के समय खर्च से हिसाब लगाकर अपने ५० साल की आयु में प्रत्येक कार्य का समय जोड़िए तो मालूम हो जायगा कि इतने बर्ष सोने में इतने वर्ष खाने में कितने वर्ष नहाने में कितने वर्ष जीवका उपार्जन में कितने वर्ष व्यर्थ बातचीत ताश खलने सिगरेट आदि पीने में बिताया और इतने बर्ष पूजा हरि स्मरण में बीता। समय का टोटल लगाने से मालूम हो जायगा कि जीवन का कितना समय सार्थक गया और कितना अधिक समय अपने ही धंधों में बीता किन्तु सोचने से यही प्रतीत होता है कि अधिकतर समय खाने सोने और कमाने में ही बीत गया। उस पर भी कितने ऐसे हैं जो आलस्य बस बैठे-बैठे और ऊँघ-ऊँघ कर ही जीवन के दिन समाप्त कर देते हैं। कितने ही मनुष्यों ने जीवन के इस कीमती समय का बिलकुल उपयोग नहीं किया। एक-एक पैसा को तो जोड़ कर बड़े जतन से रखते हैं कि पैसा जोड़ कर धनवान बनेंगे मेरे वक्त पर पैसा काम आयेगा किन्तु यह पैसा और यह शरीर यहीं छूट जायगा। लेकिन जिसने इस कीमती समय को जोड़ा उसी का जीवन सफल हो पाया। सब मनुष्य इसको नहीं जोड़ पाते इधर ध्यान ही नहीं दिया जाता कि यह समय एक-एक मिनट बड़ा ही अमूल्य है इसको व्यर्थ न गवाऊँ।

प्रकृति ने २४ घंटे रात और दिन के बीच में बना दिये हैं। वो बढ़ नहीं सकता! आप अपने सोने और व्यर्थ बातचीत नहाने श्रृंगार वाले समय को कम-से-कम खर्च करिए! और वही समय हरिस्मरण और देश सेवा और

उपकार के लिए दीजिए ! तब उसी समय को सार्थक उपयोग करके जीवन सफल बनाइए । संसार में नाम यश प्राप्त करके अपना नाम अमर कर जाइए और सुखी जीवन व्यतीत करते हुए अपनी आयु समाप्त करिए ! व्यर्थ बात-चीत ताश आदि खलने में आप को क्या लाभ हुआ । पढ़ने का समय मनोरंजन में बिताया जिस कारण उच्च डिगरी न प्राप्त कर सके यदि समय को अमूल्य जाना होता तो अपने को धोखा न उठाना पड़ता ।

का वर्षा जब कृषी सुखाने । समय चूकि पुनि का पछताने ।

जीवन के दिन में अधिक-से-अधिक समय तो सोने ही में बीत गया अब तो भला कुछ सोचिए !

महा मोह निश जागु । सोवत बीता काल बहु ।

समय का दुरुपयोग करके नीचे न गिरिये । बड़े भाग्य से मनुष्य तन मिला हैं । इस तन को उच्चकोटि का आप तभी बना सकेंगे जब आप समय का मूल्य पहचानेंगे तभी आप ऊँचे से ऊंचे शिखर पर चढ़ सकते हैं ।

जब मनुष्य का एक जगह से दूसरे शहर का ट्रान्सफर होता है । तब एक दूसरे को यादगार के लिए उपहार देते हैं । उसी भांति आपने अच्छे कर्म किये उसके उपहार में ईश्वर ने मनुष्य का सुन्दर शरीर दिया । आप उस ईश्वरीय उपहार को पाकर ईश्वर के ऋणी होगये अब आप उस ऋण को अपना अमूल्य समय जोड़ कर सत कर्म करें और भगवान का नाम जप कर यही उपहार उस प्रभु को देकर इस संसार से जाइये । जिसमें आप का नाम अमर हो जावे । जिस भांति इस संसार के महान उच्च बिचार वाले अपना नाम सदा के लिये जागृत करके गये हैं, उसी लक्ष्य पर हम सब को चलना चाहिए ।

(२) भगवान में प्रेम होना—भगवान की शरण छोड़ कर पुत्र आदि से अपनी रक्षा चाहते हैं जो स्वयं ही मृत्यु के अधीन हैं । संसार में सब से प्रेमी मां है । जब अपना बच्चा कष्ट पाकर रोता है तब मां विह्वल होकर स्वयं रो देती है कष्ट दूर करने का प्रयत्न भी करती है, पर उसका कष्ट तिल भर भी दूर नहीं कर सकती । दुःख दूर करने वाले तो वही प्रभु करुणा के सागर ही

हैं। अपने सांसारिक परिवार वालों से अगाध प्रेम रहता है किन्तु उस प्रेम में दु.ख ही दु.ख भरा है। जितना उनसे अधिक प्रेम करोगे उतना ही अधिक दुःख बढ़ता जायगा। इस दुःख के निवारण हेतु भगवान में प्रेम बढ़ाइए। जो अश्रु मां आदि के सामने अपने दुःख निवारण हेतु गिराये जाते हैं। पर माँ कुछ नहीं कर सकती। यदि वही अश्रु भगवान के सामने कातर स्वर से पुकार कर गिराया जावे तो वे करुणामय भगवान भक्तों की टेर सुनने वाले अवश्य ही आपकी पुकर सुनेंगे और तव मानव संसार में इतना दुखी होकर न जोवन व्यतीत करेगा। बल्कि सुगमता और आनन्द के साथ जीवन नैय्या खेता हुआ संसार सागर से पार उतर जायगा।

मुकुट मलिन अरु नैन बिहीना। राम रूप देखहिं किमि दीना।

किन्तु शीशा रूपी मन मैल से भरा है तो वह भगवान के रूप को कैसे पहचाने कि इनके प्रेम करने से कितना लाभ है।

अस निज हृदय बिचार। तजि संशय भजु राम कह।

अपने हृदय को साफ कर के सब संशय को छोड़ कर ईश्वर के प्रति प्रेम भक्ति धारण कर ईश्वर का नाम प्रेम से लीजिए और उन्हीं को अपनाइए तभी अपने दुःख दूर होंगे अपने में बुद्धि और शक्ति आवेगी तभी संसार में कुछ नाम कर सकेंगे।

३—सुमति—सुमति कुमति सब के उर रहई। नाथ पुराण निगम अस कहई।
जहां सुमति तहां सम्पत्ति नाना। जहां कुमति तहं बिपत निदाना।

तब उर कुमति बसी बिपरीता। हित अनहित मानत रिपु मीता।

मानव के हृदय में सुमति और कुमति दोनों रहती ही हैं। पर भेद इतना है कि जहां सुमति से काम लिया जाता है वहाँ सुख ही सुख तो रहता है और जब हृदय में केवल कुमति ही का प्रवेश हुआ अनेकों प्रकार के दुःख ही का सामना करना पड़ता है और कुमति तो सत्यानाश हो करके छोड़ती है। किन्तु अज्ञानता का परदा हृदय पर पड़ा रहने के कारण उसको अपना अच्छा, बुरा,

शत्रु, मित्र, अपने कुटुम्बी, पिता पुत्र पत्नी, पति आदि के प्रति कुछ भी नहीं सुझाई पड़ता कि किसके साथ क्या व्यवहार करूँ। उस कुमति द्वारा ज्ञान-शून्य होके वह बुरे से बुरा कर्म करने को उद्यत रहता है। अपने गृह, पड़ोस, देश, समाज, जहां भी लड़ाई का प्रारम्भ होता है इसी कुमति के द्वारा। शनैः शनैः कुमति का जाल इतना अधिक बढ़ता जा रहा है कि उसी के कारण मानव अति दुखी है। छोटे छोटे बच्चों को दुःख सुख का क्या अनुभव किन्तु निदान वह बालक भी सुखी नहीं रह पाते कुमति के कारण। थोड़ी वस्तु और छोटे छोटे खिलोने के लिये लड़ते भिड़ते हैं। आपस में द्रोह पैदा हो जाता है। उनका हृदय भी कलुषित तभी से प्रारंभ हो जाता है। बड़े होने पर पुत्र, पौत्रादिक, धन, धान्य से परिपूर्ण हैं पर उन्हें भी कुमति के कारण सुख शान्ति नहीं मिलती। कुमति ही के रोकथाम के लिये कितने कानून बने हैं। पर उस कानून से भी क्या लाभ कचेहरियों में देखिए फौजदारी के मुकदमे तथा जायदाद के लिए लड़ाई हुई यही मुकदमे अत्यधिक रहेंगे। सोचिए इतना तूफान संसार में क्यों मचा है। सब कुमति के कारण। कुमति का जाल संसार में इतना अधिक फैल गया है कि उसी के कारण आपस का व्यवहार ही दूषित होता चला जा रहा है। अपने संग सम्बन्धियों का प्रेम एक दूसरे के प्रति लोप होता जा रहा है। मानव ज्ञानशून्य होने के कारण अपना बिचार इतना कलुषित कर लेता है। तब उसी के आधार पर चलने से सदा दुःख उठाता है। और उस दुःख दूर करने की सोच ही नहीं पाता कि यह दुख कैसे दूर हो। उस दुख में सोच कर विभोर हो जायगा अपने भाग्य को कोसेगा कि मेरे भाग्य में ऐसे ही प्राणी बदे थे जो मुझे चाहते नहीं। अरे भाग्य को कोसने से क्या लाभ अपने कर्म पर पश्चाताप करने की आवश्यकता है कि इस कुमति ने हमको किसी के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करने दिया। उसी का परिणाम यह निकला कि मेरे दुःख सुख का कोई साथी नहीं है। जब मन में कुमति बसती है तब सुख को कुमति रूपी खड्ग काट डालती है। सुख अपने जीवन से चली जाती हैं। कुमति से कुढ़ते जलते जीवन समाप्त होता है। कुमति में दुख द्वन्द बढ़ाने की महान शक्ति है। जब

कुमति द्वारा श्रीराम जी को दुख उठाना पड़ा तब साधारण मनुष्य की क्या शक्ति हैं कि वह दुःख न पावे।

धनुष्य यज्ञ के पश्चात अयोध्या में सर्व प्रकार का आनन्द ही आनन्द था। ब्रह्मा आदि मुनि सब यहां का आनन्द और सुख देखने को तरसते थे हर प्रकार से सुख पूर्ण था। पशु पक्षी भी आनन्द में विभोर थे। चारो ओर सुख की बधांइयां बजती थीं सभी नर नारी बाल बृद्ध राजा दसरथ जी की जय जय कार करते थे। उन के आदर्श से भगवान भी आनन्दित थे दुख लेश-मात्र था ही नहीं। किन्तु वहां भी केकई की कुमति से दुखरूपी ऐसा अंधकार छा गया कि चारो ओर दुःख ही दूख हो गया। सुखरूघी दिन सूर्य बादल में छिप गये। कुमति का अंधकार केकई के हृदय पर इस रीति से पड़ा कि वे कुछ विचार ही न सकीं।

> बिपति बीज वर्षा ऋतु चेरी। भुई भई कुमति केकई केरी।
> पाइ कपट जल अंकुर जामा। बर द्वय दल फल दुःख परिणामा।

भगवान के बन जाने वाली बिपति की बीज मन्थरा है और केकई पृथ्वी हैं। कपट रूपी जल पाकर उस बीज का अंकुर फूटा और वही कुमतिरूपी पत्ते हुए जो दो बरदान मांगे गये।

रावण भी महाप्रतापी राजा था धन ऐश्वर्य नाती पोतों का ब्रहद समूह था पर जब कुमति बसी तो उसके सत्यानाश होने में देरी ही न लगी कि उसको कोई जलदाता ही न रह गया।

बालि को उसकी स्त्री ने बहुत समझाया किन्तु कुमति उसके हृदय में ऐसी बसी कि अपनी स्त्री का कहना न माना और भगवान से बैर किया काल के मुँह चला ही तो गया। अस्तु जब हृदय में कुमति बसती है तब किसी का कहना अच्छा नहीं लगता।

जब अष्ट ग्रह लगा था तब ज्योतिषियों ने विश्व भर के लोगों के हृदय में अष्ट ग्रह का भय भर दिया था। किन्तु कुमति का भय अब तक किसी के हृदय में नहीं आया कि जिस घर परिवार देश का नाश हुआ वहां केवल

कुमति के द्वारा। अष्ट ग्रह शान्त करने के हेतु लाखों का व्यय करके यज्ञ हुआ और भगवान ने यज्ञ आदि का फल अच्छा भी दिया कि सब शान्ति रही। अब मेरा थोड़ा सा अनुरोध है। इसमें तो रुपिये का खर्च भी नहीं है। और न कुछ मेहनत ही करना पड़ेगा। केवल एक सूक्ष्म सी धारणा हृदय में धारण करनी होगी। वह यह कि अपने हृदय की कुमति को दूर करके सुमति से काम लीजिए तो घर के लड़ाई झगड़े से मुक्त हो जाइए। स्वयं सुमति से चलिए तथा अपने बच्चों आदि को वही सुमति ही से चलने का उपदेश दीजिए। ऐसा बराबर करते रहने से हृदय से कुमति दूर होके जब सुमति सब के हृदय में बैठ जायगी है तो सदा सुख शान्ति ही रहेगी। यदि सुमति की धारणा सभी बांध लेवे तो गृह में कौन कहे विश्व ही का कल्याण हो जावे। अब सभी जन सुमति का संग्रह करके पूर्ण लाभ उठाइए।

४—**ज्ञान**—ज्ञान में बहुत बड़ी अपूर्व शक्ति है। मनुष्य ने ज्ञान के ही द्वारा कितनी बड़ी से बड़ी चीजों का निर्माण कर डाला। ज्ञान को प्राप्त करके मनुष्य विद्वान बन जाता है जिसमें ज्ञान की शक्ति है मानो उसमें महान शक्ति है। संसार में वही सब कुछ कर सकता है। ज्ञान ही के द्वारा उच्च पदवी मिलती है। ज्ञान ही के द्वारा अपनी तकदीर बढ़ जाती है और ज्ञान के कम होने से तकदीर ही शून्य हो जाती हैं क्योंकि वह मनुष्य संसार में उन्नतिपथ पर चल ही नहीं सकता। ज्ञान प्राप्त करके संसार में दुर्लभ से दुर्लभ काम उसके लिए सुलभ हो जायगा। जिसने बुद्धिमता से ज्ञान बढ़ाया है उसी ने धन, मान, मर्यादा, नाम, यश सब कुछ प्राप्त कर लिया है। जो अज्ञान है वह मूर्ख ही रह कर तमाम दुख ठोकर खाकर जीवन समाप्त कर देता है। उसको सुख प्राप्त करना दुर्लभ है। इसलिए ज्ञानवान बन कर महान शक्ति प्राप्त करके सुख उठाइए। इन चारो साधन को सोते जागते सदा स्मरण रखिए और इन्हीं को सदा संग्रह करते रहिए। तब अपना जीवन आदर्शमय और बहुमूल्यवान बन सकेगा।

———

# नया संसार

प्राचीन काल के ग्रन्थों के पठन द्वारा यह अनुभव होता है कि काम में बड़ी शक्ति है। क्योंकि घोर तपस्या करने वाले ऋषि मुनियों का तप भंग करने की यही सरल युक्ति समझी जाती थी। काम की प्रबलता पैदा करने युक्त बातें, अप्सराओं का नृत्य गान आदि से मुनियों के भी मन डिगाने का प्रयत्न किया जाता था। कामदेव अपनी प्रभुता दिखाकर शंकर जी की भी लगी हुई समाधि से मन हटाना चाहते थे तभी कामदेव ने अपनी पूरी शक्ति का उपयोग कर ड़ाला था।

तब आपन प्रभाव बिस्तारा। निज बश कीन्ह सकल संसारा।
कोपेऊ जबहि वारिचर केतू। क्षण मँह मिटे सकल श्रुति सेतू।

कामदेव ने अपनी महिमा फैलाकर सारे संसार को अपने आधीन कर लिया। उनके प्रभाव से क्षण भर में सब बेद आदि की मर्यादा मिट गई।

जो सजीव जग चर अचर। नारि पुरुष अस नाम।
ते निज निज मर्याद तजि। भये सकल बस काम।
सबके हृदय मदन अभिलाषा। लता निहारि नवहि तरु शाखा।
नदी उमंगि अम्बुध कंह धाई। संगम करहिं तलाब तलाई।
जहँ अस दशा जड़न की बरणी। को कहि सके सचेतन करणी।
पशु, पक्षी, नम, जल, थल, चारी। भये काम बश समय बिसारी।
मदन अन्ध व्याकुल सब लोका। निशि दिन नहि अब लोकहि कोका।
देव दनुज नर किन्नर ब्याला। प्रेत पिशाच भूत बेताला।
सिद्ध बिरक्त महामुनि योगी। तेपि काम बश भये बियोगी।
भये काम वश योगीश तापस पामरन की को कहे।
देखहि चराचर नारि मय जे ब्रम्ह मय देखत रहे।

अवला बिलोकहिं पुरुष मय जग पुरुष सब अबलामयं ।
दुइ दन्ड भरि ब्रम्हांड भीतर काम कृत कौतुक अयं ।

धरा न काहू धीर । सबके मन मनसिज हरे ।
जेहि राखेउ रघुबीर । ते उबरे तेहि काल मँह ।

जब कामदेव ने प्रभाव सहित अपना बिस्तार फैलाया तब योगी, तपस्वी, सभी काम के बश हो गये तो पामरों और पशुओं की कौन कहे । जो संसार को ब्रम्हमय देखते थे वे सभी उस समय कामकृत हो गये । कामदेव ने दो घड़ी तक यह ब्रम्हांड में खेल किया । उस समय कोई भी अपने मन को बस में न कर सका । सब का मन चंचल कर बुद्धि को हर लिया । जिनके ऊपर भगवान की बड़ी दया थी वही उस समय बच सका । आश्चर्य लगता है कि दो घड़ी में कामदेव का इतना बड़ा प्रभाव पड़ा कि सभी काममय हो गये ।

भूतपूर्व देखते हुए तो आधुनिक युग के नर नारी प्रशंसनीय कहे जा सकते हैं । जब कि अब हर समय काम युक्त ही वातावरण रहता है । तो भी सभ्य जन चंचल मन को शान्त ही करने का प्रयत्न करते हैं ।

आधुनिक युग में तो हर समय कामपूर्ण ही वातावरण रहता है । सनीमा, थियेटर, डांस, अश्लील भद्दे चित्रों का अवलोकन । नारियों का भेष भूषा मन आकर्षित करने वाला, नयलान की साड़ी ब्लाउजों से सुशोभित सुसज्जित शरीर की आभा चन्द्र किरणों ऐसी चमकने वाली लिपस्टिक, पाउडर से मेकप किया हुआ गुलाब ऐसा तेजस्वी चेहरा दिल को काम प्रबृति में करने वाला । पर स्त्री पर पुरुषों से आपस में मनमोहक प्रेमपूर्ण वार्तालाप, स्त्री पुरुषों से आपस में हाथ मिलाना आदि तो सभ्यता की प्रथम प्रणाली हैं । यही सब आकर्षणमय बातें तो सभ्यता प्रदर्शित करती हैं । अब तो शहर, गांव, आदि सभी जगहों में ।

चली सुहावन त्रिविध बयारी । काम कृशानु बढ़ावन हारी ।
रंभादिक सुर नारि नवीना । सकल असम सर कला प्रवीना ।
करहिं गान बहु तान तरंगा । बहु बिधि क्रीड़हि पानि पतंगा ।

उपर्युक्त चौपाइयों का दृश्य तो वर्तमान युग में मानो चित्र ऐशा खींच लिया गया हो। जिसे देखने को सभी झुकते हैं उसमें कम उम्र वाले नवयुवक और लड़कियां ही झुकती हैं। जिससे उनके आदर्श चरित्र पर बुरा ही प्रभाव पड़ता है। सनीमा आदि में पैसा भी बेकार जाता है और समय भी बरबाद होता है तथा काम उत्तेजक वृत्ति की धारणा दृढ़ होती है।

सपष्ट भी है कि जो हम आंख से देखते और कान से सुनते हैं। उसका असर दिल दिमाग पर पूरा पड़ता है, और अपने बैसे ही संस्कार बनते हैं। विशेषकर बचपन और नई उम्र में इन बातों का असर बहुत तीव्रता से पड़ता है। सनीमा आदि का व्यापार तो बढ़ता जा रहा है दिन दूनी रात चौगनी आमदनी बढ़ रही है, और इधर अपनी मर्यादा घटती जा रही है। धर्म विलीन होता जा रहा है। आज इसी अश्लील व्यवहारों के द्वारा ही यह नतीजा निकल रहा है कि—

कलि काल बिहाल किये मनुजा। नहिं जानत कोइ अनुजा तनुजा।
पर तिय लम्पट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने।
कुलवन्ति निकारहिं नारि सती। गृह आनहिं चेरि निवेरि गती।

इस कलियुग ने मनुष्यों को ब्याकुल कर दिया है कि कोई बहिन और बेटी नहीं पहिचान रहे हैं। स्त्रियां अपने सुन्दर पति को छोड़कर पराये पुरुषों की सेवा करती हैं। पराये स्त्री के भोगी छली, अज्ञानी, पर द्रोही, ममतायुक्त ही रहने वाले ब्रह्मज्ञानी कहलाते हैं। कुलीन पतिव्रता स्त्री को निकाल देते हैं, अपमान करते हैं, भ्रष्ट आचरण वाली नीच कलंकिनी को अपनाते हैं। किन्तु ऐसे कुमारगी मनुष्य या स्त्री को समाज में या कोई बिचारवान मनुष्य प्रतिष्ठा कर सकता है। बल्कि वह घृणित दृष्टि से ही देखा जायगा। भगवान ने स्वयं ही कहा है कि।

अनज बधू भगनी सुत नारी। सुनु शठ ये कन्या समचारी।
इन्हें कुदृष्टि बिलोके जोई। ताहि बधें कुछ पाप न होई।

मानस प्रेमियों बालि और रावण की घटना से अनुभव करिए कि इस कुदृष्टि डालने से उनकी क्या क्या दुर्गति हुई थी तो, क्या इस युग में ऐसा अत्याचार करने से अपनी मान मर्यादा बनी रहेगी। तथा अपनी दुर्गति से बचत होगी।

ऐसा सोचना तो असम्भव है। चरित्र निर्माण का महत्व सभी जानते हैं क्योंकि अपने-अपने देश के ग्रन्थों इतिहासों में सुचरित्रों का चित्रण भरा पड़ा है। और ज्ञानी जन उसी परमपरा के अनुसार चलने की कोशिश भी करते हैं। लेकिन वर्तमान-युग की जलवायु और परिस्थितो के दृष्टि से उस ओर से मन हट जाना भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि सद ग्रन्थ तो भूतपूर्व की बात बतालते हैं। और नये युग का मन मोहक रहस्य सनीमा, स्टेजों के ऊपर सुन्दर डांस, अमीनाबाद चांदनी चौक की सड़कों पर आकर्षक मय सुन्दर फेंशन का दृश्य और भद्दे पोस्टरों पर हर समय नजर पड़ती है। तभी युवक जन उसी कामरूपी गड्ढे में गिरते चले जा रहे हैं। कामयुक्त आंखें खुली हैं और ज्ञान चक्षु बिलकुल बन्द हैं अपने मान मर्यादा का कुछ ध्यान ही नहीं रहा। स्वयं तो गढ़े में गिरते ही हैं। अपने सन्तानों के लिए भी बिष बोते हैं।

जो आपन चाहहु कल्याना। सुमति सुयस शुभ गति सुख नाना।
तो परि नारि लिलार गोसांई। तजहु चौथि चन्दा की नांई।

अरे अपनी शुभ गति के चाहने वाले भाग्यवानों यदि सुयश, सुमति चाहते हो तो पराई स्त्री से आंखें भिड़ाते मत चलो, उनको दिल में मत बसाओ, बल्कि चौथ के चन्द्रमा के सदृश्य अपना नेत्र उनके सामने झुका कर चलो तभी कलंक से बचत होगी।

जैसे युवावस्था में शक्ति की गति बढ़ती है वैसे ही मन की गति भी तीव्रता से बढ़ती है। जिसमे इन्द्रियां विषय की ओर ही झुकती हैं। उस समय प्रत्येक नर-नारी को विषय पथ पर प्रवाहित होने वाली गति को रोक कर बुद्धि विकास पर प्रभाव डालना चाहिये। योवनावस्था में सभी वास्तविक ज्ञान शक्ति प्रबल होती

है। तभी तो लड़कियों और लड़के ऊँचे दर्जे के इम्तहान देकर उच्च श्रेणी से पास होते हैं। और कोई डिगरी प्राप्त करके किसी लक्ष तक पहुँचकर जीविका उपार्जन करते ही हैं। यदि जीविका उर्पाजन के लिए आप सब इतना एक चित्त होके पुस्तकों को मनन करते हैं उसी भांति थोड़ा समय निकाल कर सद ग्रन्थों से अपने पूर्वजों के चरित्रों को पढ़िए और मनन करिए कि हमारे पूर्वजों के कितने पवित्र धार्मिक आचरण थे और उन्हीं के वंशज होके हम क्या थे और अब क्या कर रहे हैं।

श्री राम जी ने लखन लाल जी से सीता जी के पट भूषण पहिचानने को कहा तो श्री लखन लाल जी नहीं पहिचान सके कहते हैं,

पग भूषण में सकत चिन्हारी। ऊपर कबहूँ न सिय निहारी।

कितना आदर्श भाव था। कितना उज्ज्वल चरित्र है प्रस्पर स्त्रियों को देख कर निगाह नीची हो जाती थी। ऊपर निगाह उठा कर देखना पाप था। ऐसे ही धारणा अपने हृदय में बिठाना चाहिये। भद्दे अश्लील बतों को अपने हृदय से दूर करते जाइये। पर स्त्री सुन्दरता न निहारिए। अपनी पत्नी जैसी भी हो वही सर्वस्व अर्धांगिनी सर्व प्रीय है। तमोगुण वृति मन से हटा कर सतोगुणी धारणा ही आठों याम हृदय में रखिए। संतों के उपदेश मनन करिए। बनावटी दुनिया से दूर रहिए। तभी ज्ञान शक्ति प्रबल होगी। जिसका जीवन प्रारम्भ ही से बिषय बिलास से दूर रह कर दृढ़ आत्मज्ञान संयमी शुभ सुन्दर बुद्धि का बिकास होता है। उसी का यौवनकाल और अन्त काल धर्म में ही संलग्न रहता है।

दीप निरख सम युवति तन। मन जन होसि पतंग।

दिया की रोशनी को अति सुन्दर जान कर पतंगे उसी पर टूट पड़ते हैं अंत में झुलस कर मर जाते हैं। अतः गैर स्त्री के प्रेमियों की दशा भी पतंगों की भाँति होगी।

तुलसी देख सुवेख । भूले मूढ़ न चतुर जन ।
सुन्दर केकी पेख । बचन सुधा सम अशन अहि ।

चतुर नर अच्छा सुन्दर आकर्षणमय वेष देख कर नहीं भूलते वह जानते हैं कि मोर देखने में सुन्दर है पर सर्पों का भक्षण करने वला है। कनक मणि के पत्र में सब पानी नहीं पी सकते, जिसके भग्य में होगा वही पी सकता है। और न सोने के पत्र का जल ठंडा और शीतल होगा।

प्रमाण अपनी ही नारी से सुख मिलेगा। वही सुख दुख की भागी होगी वही अपने पुरुष की कल्याणकारी तथा हितैषी और शुभ चाहने वाली गृहलक्ष्मी आनन्ददायनी होगी। पर स्त्री की सौम्य सूरत बिजली की चमक की भाँति ठहर नहीं सकती चन्द मिनट तक ही उसकी रोशनी रहेगी फिर ज्यो का त्यों अंधेरा ही अंधेरा रहेगा आधुनिक युग की रीति ही न्यारी होती जा रही है।

नया संसार सब आदि से अंत तक नया ही होता जा रहा है। खान पान रहन-सहन, तर्ज-तरीके सब कुछ नया है तो प्रकृति ने भी अपना रूप बदल दिया है।

कलि बारहि बार दुकाल परै। बिन अन्न दुःखी सब लोग मरैं।
दैव न बरसे धरणी पर। बोये न जामहि धान।

सतयुग द्वापर में किसी को कुछ दुःख ही नहीं मिलता था। अब आधुनिक युग की पृथ्वी ने भी नया रूप धारण किया है कि बोने से धान आदि जमते ही नहीं। बार-बार अकाल पड़ जाता है आदमी सब अन्न बिना मरते हैं। अब संसार में जप, तप, व्रत, ज्ञान दान आदि जो कुछ भी होता है वह सब प्रेम से नहीं उसकी भी लोग निन्दा ही करते हैं।

कलिमल ग्रसेऊ धर्म सब। लुप्त भये सद ग्रन्थ।
दम्भिन निज मत कल्पि कर। प्रकट किए बहु पन्थ।

कलियुग के पापों से सब का हृदय ही काला हो गया है, धर्म की बातें पाखन्ड में परिणित हो गई। अच्छे ग्रन्थ बेद पुराण छिप गये। झूठे प्रपगन्डा करने वाले लोगों ने अपने अपने मत करके बहुत से पन्थ चला दिए हैं।

भये लोग सब मोह बस । लोभ ग्रसे शुभ कर्म ।

अधिकतर लोग सब अज्ञान के बस होगए । लोभ ने सब अच्छे कर्म ही निगल लिए हैं ज्ञान किसी को है ही नहीं ।

बर्ण धर्म नहिं आश्रम चारी । श्रुति विरोध रत सब नर नारी ।
द्विज श्रुति बंचक भूप प्रजासन । कोउ नहिं मान निगम अनुशासन ।

चारों वर्णों और आश्रमों में धर्म नहीं है । सब स्त्री पुरुष बेद के प्रतिकूल बातों से प्रीति करते हैं । ब्राह्मण बेद से और राजा प्रजा से छल करते हैं । कोई बेद की आज्ञा नहीं मानते । जो मन में आया उसी को किया और वही धर्म समझते हैं ।

माता पिता बालकन बोलावहिं । उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं ।

माता पिता भी नये संसार की क्रिया बच्चों से करवाते हैं । उनको बुला कर वही धर्म सिखलाते हैं । जिससे पेट भरे खूब कमाई हो, चाहे वह अधर्म ही 'क्यों न हो उन्हें कुछ परवाह नहीं है ।

आपु गये अरु आनहिं घालहिं । जो कोई श्रुति मारग प्रति पालहिं ।

स्वयं तो गये बीते ही हैं जो कुछ धर्म मार्ग पर चलते हैं । उसे भी नष्ट कर डालते हैं ।

इरषा पुरुषा छल लोलुपता । भरि पूरि रही समता विगता ।
सब लोग वियोग बिशोक हये । बर्णाश्रम धर्म अचार गये ।
ईर्षा, कठोरता, छल और लालसा से दुनिया भरपूर है ।
समता तो अब जाती रही । जिस कारण सब दुनिया दुखी है ।
चारो आश्रर्म और बर्ण के धर्म आचार जाते रहे ।
दम दान दया नहिं जान पुनी । जड़ता पर-पंचक ताव सुनो ।
तनु पोषक नारि नरा सगरे । पर-निन्दक जो जग में बगरे ।

इन्द्रियों का जीतना पुन्य दान और दया कोई जानते ही नहीं । जड़ता पापों का प्रपंच सुनाई देता है । सब स्त्री पुरुष देह पालने का प्रयत्न करते हैं तथा दूसरों की निन्दा करते हैं ।

———

# मनुष्य तथा पशु पक्षी

हित अनहित पशु पक्षिहु जाना। मानुष्य तन गुण ज्ञान निधाना।

यों तो पशु पक्षी भी अपना हानि लाभ, भोग निद्रा, अहार, तथा अपना पेट भरना व अपने बच्चों की रक्षा करना आदि का ज्ञान रखते ही हैं। पर मनुष्य तन में गुण और ज्ञान प्राप्त करने की बिशेष शक्ति है। यह शक्ति पशु में नहीं है। मनुष्यों के समान ज्ञान तथा बिवेक बुद्धि यद्यपि पशु-पक्षियों में नहीं है तथापि वे इन शक्तियों से बिलकुल शून्य भी नहीं हैं। प्रकृति ने जितनी बिवेक शक्ति उन्हें प्रदान की है, उसको शिक्षा की सहायता से वे चमत्कार पूर्ण प्रदर्शन भी कर सकते हैं। तथा करते भी हैं। मास्टरों की शिक्षा द्वारा सरकस में जानवर कितने चमत्कार मय खेल दिखाते हैं। बार बार के रटाने से तोता भी सीताराम कहने लगता है कुत्ता ट्रेनिंग द्वारा अपने मालिक की इंगलिश भाषा समझने लगता है उसका खान-पान मल-मूत्र त्यागना आदि सभी कुछ मनुष्यों के समान सभ्यता नियमित हो जाता है गुण विवेकहीन होते हुए भी जहाँ पशु पक्षी इतने सुसंस्कृत हो जाते हैं वहां मनुष्य उनसे भी हीनतर आचरण करते दिखलाई पड़ते हैं। मनुष्य का शरीर ज्ञान का भंडार ही है। यदि मनुष्य ज्ञानवान न हो तो उसमें और पशु-पक्षी में अन्तर ही क्या रहा। पशु भी अपने खाने सोने का इन्तजाम कर लेता है। यदि मनुष्य ने भी केवल अपना जीवन खाने सोने के लिए ही बनाया तो मनुष्य तन धारण करना ही बेकार है। इससे बढ़ कर खेद की बात और क्या होगी।

अधिकांश मनुष्य का कर्म पशु के स्वभाव से मिलता है। तब वह पशुवत कर्म करने से दुःखी होकर संसार में भ्रमण करते करते जीवन लीला समाप्त कर चला जाता है तथा अपने जीवन के लिए कुछ नहीं कर पाता।

पुनः पता नहीं किस योनि में जन्म ले तब क्या कर पावेगा। किन्तु ज्ञानशून्य मनुष्य अपना स्वभाव पशुओं का ऐसा ही बना कर उसी के आधार पर चलते हैं। तुलसीदास जी ने सच ही लिखा है।

जो जनमे कलि काल कराला। कर तब वायस बेस मराला।

कलियुग में उत्पन्न मनुष्य के बेष हँसों के ऐसा सुन्दर और कर्म कौओं की भांति हैं।

प्रथम मृग का स्वभाव और मनुष्य के कर्म का अवलोकन करिए—

तृषित निरखि रविकर भववारी। फिरहिं मृगा जिमि जीव दुखारी।

प्यासा हिरन सूर्य की किरणों में जल मान कर दौड़ता है पर पानी नहीं पाता। इसी भांति मनुष्य इस माया मोह में लपटे सुख की खोज करते फिरते हैं। सुख न पाकर सदा दुख ही झेलते हैं। मृगा की नाभि में कस्तूरी है पर वह सुगन्ध को ढूंढ़ता हुआ बन बन फिरता है। उसी भांति मनुष्य के हृदय में भगवान बिराजते हैं पर वह ज्ञानशून्य और कर्महीन होकर भटकता है। किन्तु वह प्रभू को नहीं पा सकता।

चूहा—खल बिन स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुन गारी।

और देखिए सांप और चूहों को लाभ कुछ नहीं पर दूसरों का हानि पहुचाने में सदा तत्पर रहते हैं। वही स्वभाव दुष्ट प्राणियों में पाया जाता है। अपना लाभ कुछ नहीं पर दूसरों की हानि अवश्य चाहेंगे। जैसै पाला और ओले खेती को नाश कर स्वयं गल जाते हैं। ऐसे ही दुष्ट जन दूसरों की हानि पहुँचा कर चाहे स्वयं मर जांय पर इसकी कुछ परवाह नहीं। उन्हें तो शान्ति है दूसरों के हानि ही में।

कुत्ता भों भों और कौआ कांव कांव करता है। उसके नीरस और निरर्थक शब्द कैसे बुरे जँचते हैं। ऐसे ही मनुष्य का शब्द कितना प्रिय होते हुए भी क्रोध के आने वाली बोली भी और कांव कांव के ही तुलना हो जाती

है। जिस बोली के कारण मनुष्य हानि उठाते हुए सब के निगाहों से नीचे गिरता है। मान पाना तो दूर रहा।

बचन बज्र जेहि सदा पियारा। सहस नयन पर दोष निहारा।

उसे तो अपने कठोर वचन सदा प्यारा मालूम देता दूसरों को दोषी बना कर सदा क्रोध करता है। कुत्ता के सामने एक टुकड़ा रोटी डाल दी जाय तो सभी कुत्ते चाहेंगे कि मैं ही इसे खाऊँ। अपनी शक्ति भर प्रयत्न करेंगे एक दूसरे का मांस नोचेंगे काटेंगे रोटी भी कुचलते कुचलते दुर्गतिपूर्ण हो जाती है। तब किसी भाग्यवान कुत्ते के मुंह में जा पाती है उसी भांति मनुष्य छोटी छोटी वस्तु को चाहते हैं। मैं ही इसे पा जाऊं। दूसरा न पावे उसी के लिए लड़ाई और मुकदमेबाजी तक करते हैं।

देखिए उल्लू रात में नहीं सोते। दिन में उसकी पूर्ति करते हैं उसी भांति चोर बदमास तथा गृहस्थी के जाल में फँसे चिन्ता-ग्रसितों को रात में सोना दुर्लभ है। और प्रातः काल तथा दिन में पड़ कर खूब सोते हैं।

छिपकली दिवाल में चिपकी हुई मनुष्यों को देखा करती है। जब किसी को आते देखा तो सर से दूर भाग गई उसी भांति मनुष्य छिप कर दूसरों का अवगुण देखता है निन्दा करता है दूसरे का पत्र पढ़ता है। जब उसे आते देखा तो झट बात बदल कर दूसरे पक्ष की बात करने लग जाते हैं।

मेंढ़क और झींगुर एक आवाज से बोलते हैं न उनकी आवाज कम होती है और न ज्यादा। बरसात में रात्रि भर टर-टर बोला करते हैं। अधिक बोलने वाले मनुष्य भी किसी के सुख दुःख को सुनते हैं न पूछते हैं। बस अपने ही बोले जांयगे। उनकी बात कभी नहीं समाप्त होती।

कुत्ता का स्वाभाव है कि वह सदा बिष्टा खाता है। पर जब बैठता है तब दुम से झाड़ कर बैठता है। पाखन्डी लोग भी दिखावे में धर्म का ऊँचा झंडा फहराते हैं और दिल में छल कपट कूट कूट कर भरे रहते हैं।

बिल्ली दुबकी हुई इस नियत से बैठी रहती है कि खाने वाले की आंख जरा बन्द हो जाये तो मैं उसके थाली ही का खाना खा जाऊँ। इसी भांति लालची लोलुपों की भावना रहती है। जिसकी चीज है उससे उसकी जरा भी आंख ओझल हुई कि वस्तु हड़प करना चाहेगा। फिर चाहे सगे-सम्बन्धी ही की क्यों न हो।

मोर जंगल में नाच कर स्वयं अपनी खूबसूरती और नाच पर मस्त हो जाता है। उसी भांति घमंडी मनुष्य स्वयं अपने किये हुए कर्मों पर बड़ा नाज करता है कि मैं बड़ा अच्छा कर्म करता हूँ। मैं बहुत प्रतिष्ठित वा खूबसूरत हूँ। मेरे जैसा कोई अच्छा कार्य कर ही नहीं सकता।

काक कहहिं कल कंठ कठोरा।

जैसे घमंडी कौआ कोकिल के शब्द को कठोर कहता है। अजगर एक जगह पर पड़ा रहता है उसी भाँति आलसी मनुष्य एक जगह पर पड़े रहने का प्रयत्न करता है। वही आलस्य उसके लिये उन्नति की बाधक हो जाती है।

वे शिर कटु तूमरि सम तूला। जे न नमहिं हरि गुरु पद मूला।

जो गुरू और भगवान के चरणों में शीश नहीं झुकाते वे कड़ुवी लौकी तथा अजगर के समान हैं।

जोंक जब मनुष्य के शरीर में चिपटती है तब सारा खून चूस कर ही छोड़ती है। उसी भाँति कमान्ध स्त्री, पुरुष जब किसी पर आसक्त होते हैं तब वे उसका धन धर्म चूस कर ही छोड़ते हैं। जैसे पशुओं में आहार मैथुन की शर्म नहीं है उसी आधार पर मनुष्य चल कर अपना लोक परलोक बिगाड़ता है जो पर स्त्री पर कुदृष्टि डालते हैं।

हंसहि बक दादुर चातक ही। हंसहि मलिन खल बिमल बतक ही।

घमंडी और इधर उधर की बात बनाने वाले दुष्ट मनुष्य सदा दूसरों की हंसी उड़ाना ही अपनी सभ्यता समझते हैं। जैसे बगुला हंस की चाल पर

और मेंढक पपीहा की बोली पर हँसते हैं। कुछ जन ऐसे भी हैं जिन्हें भगवान की कथा ही नहीं अच्छी लगती। धार्मिक चर्चा सुन कर हंसते हैं।

जिन हरि कथा सुनी नहिं काना। श्रवण रन्ध्र अहि भवन समाना।

जिन्होंने भगवान की कथा रुचि से नहीं सुनी उनके कान सर्प के बिल के समान हैं।

नयनन संत दरश नहिं देखा। लोचन मोर पंख के लेखा।

जिनको संत के दरशन की चाह नहीं है उनकी आंख मोर के पंख के समान बेकार हैं।

जिन हरि भक्ति हृदय नहि आनो। जीवत शव समान ते प्रानी।
जे नहिं करहिं राम गुण गाना। जीह सो दादुर जीह समाना।

जो मनुष्य भगवान की भक्ति हृदय में नहीं लाते वे जीते ही मुर्दे के समान हैं। जो भगवान के गुणानुवाद नहीं करते उनकी जीभ मेढक के तुल्य है।

गिद्ध की दृष्टि बड़ी तीव्र होती है। वे बहुत दूर की वस्तु देखने की शक्ति रखते हैं। उसी भाँति मनुष्य दूसरों के अवगुण बहुत गहरी दृष्टि से देखते हैं। भांति भाँति की कल्पना करके अवगुण को बहुत बढ़ा चढ़ा कर बताते हैं। पर अपने अवगुण नहीं देख पाते।

वायस पालिय अति अनुरागा। होंइ निरामिष कबहुं कि कागा।
उदासीन अरि मीत हित। सुनत जरहिं खल रीति।

जैसे कोआ को स्नेह से मेवा मिष्ठान अनेकों भांति का खिलावे पर वह मांस खाना नहीं छोड़ेगा। इसी भांति छली कपटी दुष्ट जन के साथ कितनी भी भलाई करे तथापि वे अपनी बुराई करने से नहीं चूकेंगे। जो दिल के काले हैं व स्नेह रहित हैं, वे मित्र या सगे सम्बन्धी का हो हित हो पर वे देख कर जलते हैं।

मधुमक्खी बड़े प्रेम से छत्ता लगा कर फूलों का रस चूस-चूस कर शहद एकत्रित करती है पर स्वयं उसे नहीं खाती। दूसरे लोग छत्ता तोड़कर शहद निकाल कर

उसका उपयोग करते हैं। वे तो स्वयं उसी में लपट कर मरती हैं। उसी प्रकार कृपण मनुष्य धन एकत्रित करने में अपना मन लगाये रहते हैं। न दान दे सकते है। और न स्वथ खा पहिन सकते हैं। धन इकट्ठा करने ही के फिक्र में मर जाते हैं। नाम यश कुछ भी नहीं प्राप्त कर पाते। खच्चर और टट्टू सदा बोझा ढोते हैं। शरीर जरजर हो जाता है। पर जब तक जीते हैं बोझा ढोना ही उनका काम रहता है। वैसे ही मनुष्य जब से कमाने लगता है, माया मोह में फंस कर सदा अपनी गृहस्थी का बोझा ढोता है। मरने के दम तक फुरसत नहीं मिलती कि कुछ तो समय निकाल कर अपने लिए भी दान धर्म करले।

यदि पशु ही का स्वभाव लेना था तो उन पशुओं का स्वभाव डालते जिनमें अपना कल्याण होता है। चिड़ियों से सुबह का जागना सीखते जो प्रातःकाल से ही जागकर चूं चूं बोलने लगती हैं कोकिल की ऐसी मीठी वाणी बोलते। गाय की भांति सब की रक्षा करते तथा अपने धन पराक्रम से सबकी सेवा करते। या जैसे श्रीराम जी के समय में जानवर थे उस प्रकार के बनते।

खगहा करि हरि बाग बराहा। देखि महिष बक साजि समाजा।
बैर बिहाय चरहिं एक संगा। जहं तहं मनहु सेन चतुरंगा।

गैंड़ा, हाथी सिंह, बाघ, सुअर, भेड़िया सब आपस में बैर छोड़कर प्रेम से एक साथ चरते व जल पीते थे।

आधुनिक युग में ऐसा परिवर्तन हो गया कि लड़के का परिवार और माँ बहिन सब प्रेम से एक साथ नहीं रह पाते। उसका कारण यही कि अब पशु-वृति है और अच्छी संगत नहीं है।

काहुहि सुमति कि खल संग जामी। शुभगति पाव कि परतिय गामी।

क्या दुष्ट संग से किसी की अच्छी बुद्धि हो सकती है। या पराई स्त्री का भोगी यशी और कुलवन्त धार्मिक कहला सकता है।

हानि कि जग यह सम कछु भाई। भजिय न रामहि नर तन पाई।

भाई संसार में क्या इसके सामान कोई हानि है कि मनुष्य की देह पाकर भी अच्छे कर्म न करे और ईश्वर को न भजे।

नर तनु सम नहिं कौनेउ देही। जीव चरा चर याचत जेही।
नरक स्वर्ग अप वर्ग निसेनी। ज्ञान विराग भक्ति सुख देनी।
सो तनु धरि हरि भजहिं जे नर। होय विषय रत मन्द मन्द तर।
कंचन कांच बदलि शठ लेहीं। करते डारि परसि मणि देही।

नर तन समान कोई देह नहीं है। इसे चर अचर सभी जीव मांगते हैं। यह स्वर्ग मिलने की सीढ़ी है। जो मनुष्य देह मिलने पर भी अच्छे कर्म नहीं करते वे नीच से भी नीच हैं। वे मूर्ख सोना देकर कांच लेते हैं और हाथ आया पारसमणि खोते हैं। किन्तु अब तक जो हुआ सो हुआ अब शेष जीवन के लिए सोचिए और वह पशुवत स्वभाव छोड़कर वास्तविक मनुष्य बनने का प्रयत्न करिए। राजा परीक्षित तो ७ ही दिन में सप्ताह सुनकर मोक्ष प्राप्त किये थे। अभी हम सभी लोगों का जीवन में पता नहीं कितने दिन बाकी हैं। जितने दिन जीवन के शेष हैं उसमें तो शुभ कर्म अवश्य ही कर लेना चाहिए।

शठ सुधरहिं सत संगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई।

अति बुरा व्यभिचारी भी सत संगति पाकर सुधर जाते हैं। जैसे पारस छू जाने से लोहा भी सोना हो जाता है।

सत संगति मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।

आनन्द और मंगल का मूल अपना जीवन सुधारने वाली सत-संगति है। वही सब सिद्धियों का फल देने वाली है। बिना सत संग के ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता।

मज्जन फल देखिय तत्काला। काक होहिं पिक बकहु मराला।
सुनि आश्चर्य करै जन कोई। सत संगति महिमा नहिं गोई।

अच्छी संगीत में बैठने से बुद्धि में शीघ्र परिवर्तन होगा। सत संग करिए उसका लाभ स्वयं ही शीघ्र मालूम होगा। संगत से कठोर बोलने वाला कौआ

भी पपीहा के समान मीठी बोली बोलने लगते हैं। बगुला मांस भक्षी हंस के बीच रह कर मोती चुगने लगता है। इसमें आश्चर्य कुछ नहीं। यह अच्छी संगति का प्रभाव है। थोड़े परिश्रम से अपना जीवन शुचि निर्मल हो जायगा।

प्रत्येक मनुष्य को प्रति दिन यह अवश्य सोच लेना चाहिए कि मैंने जिन्दगी में कोई पशुवत कर्म किये हैं या आज कर रहे हैं या पशु ऐसी कोई वृति है। सोचने से प्रत्यक्ष प्रगट हो जायगा। सौभाग्य से कोई पशु कर्म नहीं किया तो अच्छा ही है। और यदि कोई भी कर्म जानवरों के हैं तो सुधारने का प्रयत्न करें।

भल, अनभल निज निज कर तूती। लहत सुयश अपलोक बिभूती।

भले और बुरे कर्म के फल से यश और अपयश स्वयं ही मिलता है। किन्तु जिसकी जैसी बुद्धि है वह वैसा ही कर्म करता है। अपने ही किये कर्म से पशु और मनुष्य बन सकता है।

गुण अवगुण जानत सब कोई। जे जेहि भाव नीक तेहि सोई।

सज्जन और दुर्जन सभी गुण और अवगुण को जानते हैं। परन्तु जिसमें जिसकी भावना है उसको वही अच्छा लगता है। किन्तु केवल अपने भावना के ऊपर ही जीवन समाप्त कर दिया जावे तब यह नर तन लेना निरर्थक हो जायगा। इस लिए बुरे संग से बच कर भले ही संग में बैठिए।

साधु असाधु सदन शुक सारी। सुमरहिं राम देहिं गुण गारी

साधुओं के घर में पाले हुए तोता तोती भी सुसंग के प्रभाव से राम राम कहते हैं। और दुष्टों के घर पाले तोता तो गाली देते हैं।

धूम कुसंगति कारिख होई,
लिखिय पुराण मंजु मसि सोई।
सोई जल अनल अनिल संघाता,
होई जलद जग जीवन दाता।

वही धुआं कुसंग से करिखा और वही धुआं सुसंग से काजल तथा स्याही जिससे पुराण लिखे जाते हैं। और अगर की बत्ती के धुआं से ईश्वर खुश होते हैं, तथा स्वास्थ्य को लाभ पहुँचाती है। वही जल अग्निको नाश करे और वही जल ताप और वायु के मेल से संसार का जिलाने वाला बादल हो जाता है। इसी भांति जो भी मनुष्य अब तक पशु कर्म करने में तल्लीन रहे हों वे भी यदि अच्छी संगति करेंगे तो उनके पशुवत कर्म छूट कर मनुष्यवत् आचरण हो जायगे तथा महान पुरुष बन जायगे किन्तु अब बिलम्ब न करें। क्योंकि जीवन के थोड़े ही दिन शेष बचे हैं मनुष्य का तन, रक्त मांस हड्डी का बना हुआ। उस पर भी उसमें रात दिन में मल-मूत्र कफ-थूंक इकट्टा होता रहता है इसलिए वह गंदा है। मन, में भांति-भांति के विकार भरे हैं। इसलिए मन भी गंदा है। अब कर्म भी पशुओं के ऐसे हैं तो अपने शरीर में क्या साफ हो रहा। तन तो ईश्वर की और प्रकृति की देन से गंदा ही रहेगा। पर अपना मन और कर्म तो उज्जवल बना ही लेना चाहिए।

समय चूकि पुनि का पछिताने। का वर्षा जब कृषि सुखाने।

बड़े सौभाग्य से यह मनुष्य तन मिला है। इस शुभ अवसर को न जाने दो, अपना जीवन सुधार कर बना ही लो, ताकि अन्त में पछिताना न पड़े।

---

# श्री राम नाम की महिमा

नहिं कलि कर्म न भक्ति विवेकू । राम नाम अवलम्बन एकू ।

सच है अमीर गरीब, वृद्ध, युवा, बालक, पशू, पक्षी सभी के लिए एक राम नाम का ही सहारा है । अधिक से अधिक दुःख काटने की प्रबल धारवाली छूरी है । संसार की सारी वस्तुयें झूठी केवल एक नाम लेना ही सत्य है । जो कि मनुष्य के जीवन में अनेकों बार घटती है । श्मशान जाते समय यही मुख से निकलता है कि राम नाम सत्य है । यही धारणा सब को आठों याम मन में दृढ़ रखनी चाहिए ।

कबि कोबिद अस हृदय विचारी । गावहिं हरि गुण कलिमल हारी

कबि और विद्वान जन ऐसा बिचार करके कहते हैं कि कलयुग के पापों को दूर करने वाला राम का गुणानुवाद और नाम ही लेना सार्थक है । नाम और रूप की अकथ कहानी है इसे लिखने की लेखनी में सामर्थ ही नहीं है । जब हृदय का अंधकार दूर हो जाता है । तब श्री राम के चरणों में प्रेम होता है । हृदय में समझने से सुख मिलता है ।

दुख में केवल नाम ही साथ देता है । नाम लेके कितने पापी तर गये । केवल नाम ही एक ऐसा साधन है, जिसमें धन का खर्चा नहीं । शरीर को कष्ट नहीं । सच्चे मन से चलते फिरते, काम करते, हर समय नाम का जप हो सकता है । सरांश यही कि सच्चे मन से भगवान को याद करो और उनका नाम जपो । नाम जपने ही से सारे दुःख दूर होंगे । और मन में हर समय नाम जप करने की धुनि लगी रहेगी, तब मन में पाप विकार कम उठेंगे जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि से मन की चंचलता क्षण क्षणभर में काम करती है । जिससे मनुष्य अनेकों दुःख भोगता है ।

अति अपार जे सरितवर । जो नृप सेतु कराहिं ।
चढ़ी पिपीलिका परम लघु । बिन श्रम पारहिं जाहिं ।

जो बड़ी नदियां अथाह भरी हैं । किन्तु पुल बन जाने से छोटी सी चींटी भी बिना परिश्रम पार हो जाती है । उसी भांति लगन सहित जो कोई हरिनाम जपेगा वह भवसागर से सहज ही पार हो ही जायगा ।

मनुष्य यदि खुराक से कम खाता है तब भूखा रह जाता हैं । इसी भांति नाम जप की भी खुराक की भांति मन में धारणा बांधिए कि हमको २४ घंटे में कितने बार नाम अवश्य लेना है । यदि सांसारिक कार्यों से नाम लेने की फुरसत नहीं मिलेगी तब चित्त में ग्लानि होगी कि आवश्यक कार्य छूट गया । शनैः शनैः इसी धारणा से भगवान के प्रति प्रेम बढ़ेगा । जिसके हृदय का कलुषित बिचार साफ होके चित्त निर्मल होता चला जायगा । मनुष्य को अपने प्रति सांस में राम नाम लेने का अभ्यास करते रहना चाहिए ।

जासु नाम भव भेषज । हरण घोर त्रयशूल ।
सो कृपाल मोहि तोहि पर । सदा रहैं अनुकूल ।

जिनका नाम जन्म-मरण रूप संसार से पार करने और तीनों गुणरूपी घोर शूल के हरने वाला है । वही कृपाल राम जी तुम्हारे और मेरे ऊपर प्रसन्न रहें ।

मुनि दुर्लभ हरि भक्ति नर । पावहिं विनहिं प्रयास ।
जो यह कथा निरन्तर । सुनहिं मानि विश्वास ।

लो मनुष्य विश्वास से यह कथा नित्य सुनते हैं, उनको भगवान वह गति सहज ही में दे देते हैं जो मुनियों को बड़े कठोर तप से मिलती है । भगवान की कृपा से अन्होनी भी हो जाती है । राक्षस मांसाहारी थे उनको भी मुक्त किया । यानि उन्हें भी परम गति दी । ऐसे कृपाल भगवान को जो न भजे वह अति ही पापी है । पतित पावन भगवान ने तो अनेक नीच योनि वालों को तारा । पक्षी, जटायु, बन्दर, व्याध बाल्मीक, पत्थर अहिल्या, केवट, शवरी,

गणिका आदि जो इनमें पशु योनि में थे उन्हें भी ज्ञान भक्ति दी जिससे उनका उद्धार हुआ। और मनुष्य को तो देवता ऐसा सुन्दर शरीर दिया है उससे चारो फल अर्थात धर्म, काम, मोक्ष, अर्थ सभी साधन प्राप्त हो सकता हैं जिसको बुद्धिमान जन प्राप्त करके परम पद को पहुँच जाते हैं। हम सबों के ऊपर तो भगवान की असीम कृपा है। पर हम लोग अज्ञानता बस स्वयं ही भगवान से दूर रहते हैं। भगवान ही संसार में अपने सच्चे हितैषी हैं। यों लौकिक व्यवहार में देख लीजिए जिससे अपना स्वार्थ निकलता है उसी से आदमी अधिक प्रेम करता है। यहाँ तक देखने में आया है कि मां के कई बच्चों में जो बच्चा मां की अधिक सेवा करता है। मां उसी को अधिक चाहती है किन्तु यह सच्चा प्रेम नहीं है बल्कि स्वार्थ का प्रेम है मां के लिए तो सभी बच्चे एक समान हैं। पर भगवान के दरबार में स्वार्थ का प्रेम नहीं है। वहां तो ऊँच नीच पापी चन्डाल सभी एक समान हैं। वे सब पर कृपादृष्टि रखते हैं। ऐसे निस्वार्थी करुणामय भगवान को क्यों न भजा जावे। इस स्वार्थी संसार में प्रेम करने से क्या लाभ बल्कि दिन दिन उसी कीचड़ में सनते रहेंगे और दलदल में भी फँसने की ही सम्भावना रहेगी। जितना संसार में लिपटेंगे बिषय वासना उतनी ही अधिक बढ़ती जायगी। और भगवान का भजन न हो सकेगा जिस कारण अवश्य नरक में गिरेंगे। इसलिए कपट छोड़कर भगवान से सच्चा प्रेम करो। वे दयानिधान अपने भक्तों पर सदा से स्नेह करते आये हैं। और कलियुग में बड़ा भारी गुण भी भगवान ने रक्खा है। जैसे कलियुग के आदमी परिश्रमहीन होते हैं। वैसे थोड़े से ही भगवान नाम जप करने से अपने को पुन्य मिलता है। अथवा यही साधना की दस अवस्था हैं :

(१) भगवान की ओर मन लगाना, (२) उसको पाने के लिये आतुर होना, (३ उनकी ओर चतुराई से बढ़ना, (४) मन को साधन के ऊँचे से ऊंचे शिखर पर पहुँचने की चेष्टा करना, (५) उनके प्रेम में नेत्र से प्रेमाश्रु बहाना, (६) मन का आनन्द सागर संतसंग करने के लिये आतुर रहना, (७) निश दिन इष्ट लाभ के लिये जप करना, (८) अपने को भूल जाने के भाव का

उदय होना, (९) साधक को सिद्ध का लाभ होना, (१०) आठों याम नाम जप करना। मन में नाम जप करिए यदि संगीत पसन्द है तो स्वर से राग द्वारा कीर्तन करिए। हाथ से लौकिक काम। जिव्हा से भगवान गुणगान। हृदय से भगवान का ध्यान। नेत्रों से भगवान का दर्शन। श्रवण से भगवान का गुणगान सुने। यदि हम सब इन बातों का ध्यान कर लें तो कितना सुन्दर समय व्यतीत हो।

अब चलिए भवसागर पार करना है। पल पल पर छांह न ढूढ़ें नहीं तो पहुँचने में बहुत देरी लगेगी। अर्थात सांसारिक सुख इन ढूढो नहीं तो राम भजन में बाधा पड़ेगी। और अपने भी कर्म बुरे रह जायंगे। जैसे दिन भर मनुष्य जितना भी अधिक परिश्रम करता है, रात में उतनी ही अच्छी नींद आती है। वैसे जब मनुष्य माया मोह से दूर रह कर संसार में अच्छा कर्म करता है। जैसे दान देना, साधू सेवा करना, दूसरों के साथ उपकार करना, अनेकों पुरुषार्थ करना। जो जीवन में सदा अच्छे ही काम करके अपना जीवन बिताता है, वह मरने के समय यही सोचता है कि जितने अच्छे कार्य करने को थे कर चुके किसी कार्य पर उसका मन आशक्ति नहीं रहता। अपने मन की सारी शक्ति भगवान के ऊपर लग जाती है तब मरने के समय अधिक कष्ट नहीं होता। जब बच्चा मरता है या अधिक मोह में फँसने वाला मरता है तो उसका संसार ही की ओर ध्यान रहता है कि संसार में आके कुछ न किया हा! जल्दी चले जा रहे हैं। मन का संसार की ओर खिचाव होने के कारण जीव मरते समय बहुत कष्ट पाता है।

यात्री प्लेटफार्म पर अपना असबाब संभाले खड़ा रहता है ट्रेन आई आराम से बैठ कर चला गया। यात्री अपना असबाब उचित रूप से न संभाल कर खड़ा रहे तो सम्भव है कि ट्रेन आने पर भीड़ के धक्के के वजह से सामान छूट जावे ऐसी ही संसाररूपी स्टेशन पर अपना धर्मरूपी सब कार्यों को संभाले हुए प्रत्येक क्षण तैयार रहना चाहिए। जिस दिन इस दुनिया से कूच करना पड़े तो सारलता से चले जांय। संसाररूपी समुद्र से पार होने के लिये राम नाम ही नौका है। जो अमीर, गरीब सब को पार लगाने का सहारा है।

दुःख में केवल नाम ही आधार है। जब तक दिल से राम नाम का स्मरण नहीं करोगे। जहां रहोगे वहीं दुःख पावोगे। चलते फिरते सोते जागते तथा स्वप्न में भी सुख से न सो पावोगे। बार बार जन्म लेकर युग युगान्तर दुख भोगोगे। राम नाम महामणि के समान है। इस संसार का झूठा नाता सर्प के समान है। जो काट के ही रहेगा। यानी माया मोह का बन्धन सदा दुःखदाई है। राम नाम कल्पबृक्ष है सब फलों का देने वाला है इसलिये राम नाम खूब जपो।

राम नाम मणि दीप धरु। जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरो। जो चाहसि उजिपार।

जैसे घी के बिना दीपक नहीं जल सकता। और दीप जले बिना उजेला नहीं हो सकता। वैसे बिना राम नाम जपे काम क्रोध आदि दूर नहीं होते इस लिए हृदय में उजेले की चाह है तो जिब्हा से मणि के समान दीप श्री राम नाम को जपिए।

जाना चर्हांहि गूढ़ गति जेऊ। नाम जपि जीव जानहिं तेऊ।
साधक नाम जपहिं लव लाये। होहिं सिद्ध मणि माणिक पाये।

जिनको माया की गूढ़ गति जानने की इच्छा है। वे राम नाम जपने ही से ज्ञान प्राप्त करते हैं। यदि साधना करने वाले एकाग्रचित्त हो प्रीति से नाम जपते हैं तो वे सिद्ध हो जाते हैं।

जपहि नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंग होहिं सुखारी।
चहुँ युग श्रुत नाम प्रभाऊ। कलि विशेष नहि आन उपाऊ।

आर्त लोग दुःखी हो नाम जपते हैं। उनका घोर दुःख मिट जाता है। और वे सुखी हो जाते हैं। चारो युगों और चारो बेदों में नाम का ही प्रभाव है। कलियुग में नाम जपने के अतिरिक्त दूसरा साधन ही नहीं है।

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी।

राम जी ने केवल अहिल्या को तारा और नाम के जपने से अनेकों दुष्टों की दुर्बुद्धि सुधरी।

दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किय पावन।
निश्चर निकर दलेऊ रघुनन्दन। नाम सकल कलि कलुषनिकन्दन।

श्री राम जी ने दडंक बन को सुशोभित किया और नाम ने अगणित लोगों को पवित्र किया। राम जी ने राक्षसों को मारा और नाम ने कलियुग के पाप को नाश किया।

शवरी गीध सुसेवकन। सुगति दीन्ह रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल। बेद बिदित गुण गाथ।

श्री राम जी ने शवरी जटायु आदि सेवकों को मुक्ति दी और नाम ने अनेकों दूष्टों का उद्धार किया। जिसके गुणों की कथा सब वेद पुराण और ग्रन्थों में प्रसिद्ध है।

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। बिन श्रम प्रबल मोह दल जीती।
फिरत सनेह मगन सुख अपने। नाम प्रसाद सोच नहिं सपने।

नाम का स्नेह से स्मरण कर भक्त लोग बिना परिश्रम माया मोह की बलवती सेना को नीत कर आत्मानन्द में मग्न होकर रहते हैं। नाम की सहायता से स्वप्न में भी सोच नहीं रहता।

नाम कामतरु काल कराला। सुमति शमन सकल जग जाला।
राम नाम कलि अभिमत दाता। हित परलोक सुख पितु माता।

इस भयानक समय में राम जी का नाम कल्पवृक्ष है। इस नाम का स्मरण करते ही सब दुःख नाश हो जाते हैं। राम नाम कलियुग में मनोरथ का देने वाला है। लोक और परलोक में राम नाम ही अपनी भलाई का देने वाला है। ऐसे करुणामय भगवान के प्रति सच्चे हृदय से प्रेम हो। यही कल्पना निरन्तर करना चाहिए। और अपने नन्हें बच्चों के हृदय में अगाध प्रेम

हो जावे ऐसी वार्ता नित्य उनके सामने की जावे। ताकि नास्तिक न बनें। बल्कि ध्रुव, प्रहलाद ऐसे भक्त होवें जिससे उनुका कल्याण हो।

नाम तो चलते फिरते निरन्तर जपते ही रहना चाहिए। प्रातः काल बहुत ही शान्त वातावरण रहता है। उस समय अपनी नित्य क्रिया से निबृत हो कर छोटे बड़े सबों को शान्त चित्त हो के भगवान के आकर्षणमयी छटा को थोड़ी देर तो अवश्य ही मनन करना चाहिए। प्रेम से प्रभू के चित्र की ओर कुछ समय तक बराबर देखते रहने से प्रेम बढ़ता है। उनके दर्शन के लिये मन आतुर हो जाता है। भगवान का लोचनाभिराम सौन्दर्यमयी चित्र को देखने से मन और आखों को शीतलता मिलती है। जिसका चित्र कितना मनोहर आकर्षण करने वाला है। देखने से नैन थकित ही नहीं होते बल्कि हृदय का उल्लास बढ़ता जाता है। नेत्र कितना भी दर्शन करें किन्तु वह पूर्ण प्यास नहीं बुझती चित्र के अदृश्य होने पर हृदय में भारी कोलाहल सा उठता है। प्रेमी जन दर्शन के लिये बेचैन रहते हैं। ध्यान दीजिए जिस चित्र अवलोकन से इतना आनन्द मिलता है। उस सांवली छबि के प्रत्यक्ष दर्शन से कितना आनन्द मिलता रहा होगा। वह आनन्द तो गोकुलवासियों व नन्द यशोदा को और कौशिल्या माता आदि ने लिया।

अब वह छबि नहीं मिल सकती, पर किसी काम से हताश नही होना चाहिए। यदि हम किसी काम पर ढांढस से बलपूर्वक अड़े रहेंगे तो भगवान उस काम में सफलता अवश्य ही देंगे। भगवान तो चिन्तामणि हैं। यदि जीव उनकी सांवली छबि देखने के लिये आतुर हो और अपना जीवन भगवान ही के प्राप्ति हेतु लगावे तो वे भक्त को अवश्य मुक्त कर देंगे।

उल्टा नाम जपत जग जाना। वाल्मीक भे ब्रह्म समाना।
श्वपच शबर खस यवन जड़। पामर कोल किरात।
राम कहत पावन परम। होत भुवन विख्यात।

उल्टा नाम जपने से बाल्मीक जी ब्रह्म के समान हो गये। चन्डाल नर

पर्वतों पर रहने वाले मलेच्छ, कोल, भील्ल, आदि नीच लोग राम कहते ही परम पवित्र और संसार में प्रसिद्ध हो गये )

छोटे बच्चे की मन्द मुस्कान तोतली बोली उसके माता पिता क्या दूसरों को भी प्रिय लगती है। तब बच्चे को प्यार करते हैं। उसके माया में लिपट जाता है। यदि इसी भाँति हम सब भगवान के रूप को हृदय में रख कर मनन करें मुग्ध हो जावें तथा उस छबि को देखने के लिए आतुर हों और उन्ही की माया में लिपट जांय तो कितना आनन्द मिले। यह लौकिक माया तो दुःख देती है किन्तु प्रभु की माया में लिपटने से हमे सच्चे सुख का अनुभव होगा। भगवान के इस सुन्दर स्वरूप में इतना गुण है कि उनके शुभ दर्शन से माया रूपी अंधकार में ज्ञान का सूर्य बन कर प्रकाश आजाता है। और फिर मनुष्य का सर्वदा के लिये कल्याण हो जाता है। भगवान के इस सुन्दर रूप और नाम में इतना गुण है। पर हम सब ज्ञानरूपी सूर्य को छोड़ कर अज्ञानरूपी अंधकार ही की ओर जाते हैं। अपने अमूल्य जीवन को व्यर्थ में ही गवां कर कांटों की झाड़ी की भांति मायाजाल में फंस कर उसी से उलझ कर मर रहे हैं। रात दिन चिन्ता सागर में डूबे रहते हैं किसी समय विश्राम नहीं मिलता।

अंहकार ममता मद त्यागहु। महा मोह निश सोवत जागहु।
कठिन काल मल ग्रसित तनु। साधन कछुक न होइ।
यह बिचार बिश्वास करि। हरि सुमिरे बुद्धि सोई।
मन हरि पद अनुराग। करहु त्याग नाना कपट।
महा मोह निश जागु। सोवत बीता काल बहु।
नील कंज रघुपति तनु सुन्दर श्याम। हृदय राखु लोचन अभिराम।

श्री प्रभु को हृदय में धारण कर लोचनों को सुख दे और सुख शान्ति पा के विश्राम कर लो।

कौतुक जाने जन कोई। जिन पर कृपा राम की होई।

किन्तु यह भगवान के रहस्य को वही जान सकता। जिस पर प्रभु की बड़ी दया होती है।

जग पावन किरति विस्तरहिं। गाइ गाइ नर भव निधि तरहिं।

वही भगवान का यश कीर्ति गा गा कर मनुष्य भवसागर से पार हो जाता है।

जासु नाम भव भेषज। हरण घोर त्रय शूल।
सो कृपाल मोहि तोहि पर। सदा रहें अनुकूल।

जिनका नाम जन्म मरण रूप संसार की बन्धन छुड़ाने की दवा है। और तीनों गुणमयी माया रूप घोर शूल के हरने वाले हैं। वही कृपाल श्री राम जी तुम्हारे और मेरे ऊपर सदा प्रसन्न रहें।

संसृत रोग सजीवन मूरी। राम कथा गावहिं श्रुति शूरी।
मन कामना सिधि नर पावा। जो यह कपट तजि गावा।
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं। ते गोपद इव भवनिधि तरहीं।

जन्म मरण रूप रोग के लिये यह संजीवन-मूर है। ऐसा वेद पुराणों का कहना है। जो कपट छोड़ कर भगवान को भजता है। उनकी सब मनो-कामना सिद्ध होती हैं। और संसार समुद्र को गो के खुर भर जल की बराबर वह सुगमता से पार कर लेता है।

ताहि भजिय मन तजि कुटलाई। राम भजे गति केहि नहिं पाई।

ऐसे प्रभु को मन की कुटिलाई दूर कर के भजो। इस कलियुग में नाम जप ही सच्चा सार है। इसी से मनुष्य सब कुछ पा सकता है। दनुज से मनुज और मनुष्य से देवता बन सकता है। उन्हीं के शरण में जाने से तरन तारन हो सकता है।

माता पिता सुयोग्य बर ढूढ़ कर पुत्री का हाथ उन्हीं को पकड़ा कर संकल्प देते हैं। गांठ जोड़ कर सात फेरे घुमाये जाते हैं। जिस कारण पति स्त्री

के जीवन-रक्षक का पूरा अधिकार हो जाता है। संसार में पति ही का ऐसा घना सम्बन्ध है जो कुछ दुःख सुख मे सदा साथ देते हैं। पति तो भांवर फेरने और हाथ पकड़ने से इतना अधिकारी हो जाता है कि जब तक जीवन है तब पति बराबर साथ देता है। अरे प्रभु को करुण पुकार लगाइए वे अपना हाथ पकड़ें, और उन्हें भक्तिरूपी डोरे के फेरे लगा कर करूणानिधान को स्नेह से बांधिए। उनके हाथ पकड़ने और उन्हें प्रेम बन्धन में बांधने से लोक परलोक दोनों ही बनेगा और सरलता से बेड़ा पार हो जायगा। भगवान से सदा यही विनय करनी चाहिए।

अब करि कृपा देहु बर येहू। निज पद सरसिज सहज सनेहू।
कर्म बचन मन छांड़ि छल। जब लगि जन न तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहु नाहिं। किये कोटि उपचार।

अब प्रभु दया करके यह बरदान दो कि चरणकमलों में प्रीति हो। मन क्रम, बचन, कपट, छोड़ कर जब तक जीव राम नाम नहीं भजता तब तक करोड़ों उपाय द्वारा भी सुख शान्ति नहीं मिलती।

होय न राम प्रेम बिन ज्ञाना। कर्णधार बिन जिमि जलयाना।

राम जी के प्रेम के बिना ज्ञान नहीं होता। जैसे कर्णधार के बिना जहाज नहीं चल सकती। श्री राम नाम का अवलम्ब लेकर अपने जीवन को सफल बनावें तभी इस कलियुग में जीवन लेना सफल हो। और अन्त में परम पद को प्राप्त हो।

तजि माया सेइय परलोका। मिटहिं सकल भव संभव शोका।
देह धरे कर फल यह भाई। भजिय राम सब काम बिहाई।

माया छोड़ कर परलोक का सेवन करो जिससे संसार के उपजे शोक मिट जांय। हे सज्जनों! मनुष्य तन लेने का यही फल उठाओ सब काम विकार छोड़ कर राम जी को भजो।

सुखी मीन जहं नीर अगाधा । जिमि हरि शरण न एकौ बाधा ।

जिस प्रकार गहरे जल में सब मछलियाँ सुखी रहती हैं । उसी प्रकार भगवान की शरण में जाने से सब दुःख रहित हो जाते हैं । कभी कोई बाधा की सम्भावना ही नहीं होती । ऐसे करुणामय भगवान को मन चित्त लगा कर सदा भजो, जिससे अपना जीवन सार्थक हो जावे ।